मूल्य : 20/-

घोषणा पत्र संख्या : 153/2016-17

वर्ष : ३

जनवरी : २०१९, विक्रमी सम्वत् : २०७५
सृष्टि सम्वत् : १९६०८५३११९, दयानन्दाब्द : १९५

अंक : ७

ओ३म्

।। कृण्वन्तो विश्वमार्यम् ।।

सत्य और ज्ञान से भरपूर आर्यसमाज नोएडा का मासिक मुखपत्र

विश्ववारा संस्कृति

मानवीय जीवन मूल्यों की संरक्षक पत्रिका

"सा प्रथमा संस्कृतिविश्ववारा"

नमो ब्रह्मणे नमस्ते वायो त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिष्यामि ऋतं वदिष्यामि सत्यं वदिष्यामि। तन्मामवतु तद्वक्तारमवतु। अवतु माम्। अवतु वक्तारम्।।

ईश्वर का व्यापक ज्ञानस्वरूप पूज्य और सहज स्वभाव जानकर हम उसकी उपासना करें तथा जीवन में सदा सत्य का आचरण करें।

सुभाष चन्द्र बोस
(जन्म दिवस : 23 जन.)

लाला लाजपत राय
(जन्म दिवस : 28 जन.)

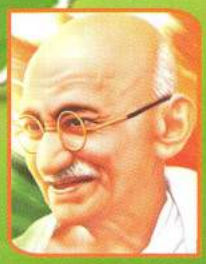

महात्मा गांधी
(स्मृति दिवस: 30 जन.)

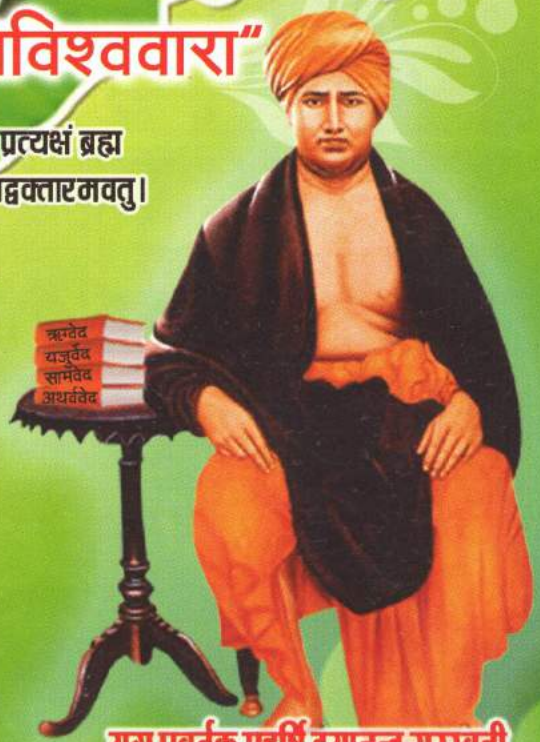

युग प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती
1824-1883

आर्यसमाज, आर्ष गुरुकुल, वानप्रस्थाश्रम के भव्य वार्षिकोत्सव की झलकियां

ओ३म्

।। कृण्वन्तो विश्वमार्यम्।।

विश्ववारा संस्कृति

मानवीय जीवन मूल्यों की संरक्षक पत्रिका

संरक्षक
श्री आनंद चौहान, श्री सुधीर सिंघल
श्रीमती गायत्री मीना 'प्रधान'

प्रबंध संपादक
आर्य कै. अशोक गुलाटी

संपादक
आचार्य डॉ. जयेन्द्र कुमार

व्यवस्थापक
ओमकार शास्त्री

प्रकाशक और मुद्रक
स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक एवं संपादक डॉ. जयेन्द्र कुमार द्वारा वत्स ऑफसेट, मुद्दा हाऊस, सी-ब्लॉक, बारात घर, चौड़ा रघुनाथपुर, सेक्टर-22, नोएडा से मुद्रित एवं आर्य समाज, बी-69, सेक्टर-33, नोएडा, गौतमबुद्धनगर से प्रकाशित किया।

Title Code : UPMUL-200652

घोषणा पत्र संख्या : 153/06.06/2016-17

मूल्य

एक प्रति	: 20/-	वार्षिक	: 250/-
पांच वर्ष	: 1100/-	आजीवन	: 2500/-

विदेश में वार्षिक शुल्क : 3100/-

अनुक्रमणिका

क्रम सं.	विषय	पृष्ठ
1.	संपादकीय : संस्कृत का पठन...	2
2.	वैदिक धर्म और संस्कृति	3
3.	प्रजापते न त्वदेता...	4-5
4.	भगवद्गीता और धर्म	6-7
5.	वेदों का स्वाध्याय...	8-9
6.	आदर्श व्यक्तित्व वीर हनुमान	10
7.	यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते...	11
8.	महापुरुषों को नमन...	19
9.	बचाइए! विवाह संस्कार की...	21
10.	वैदिक चिंतन...	25
11.	समाचार-सूचनाएं	31
12.	सुस्वास्थ्य : दूध-केला-दलिया...	32

पाठकवृंद : कृपया स्वयं समाज एवं राष्ट्र के उत्थान के लिए 'विश्ववारा संस्कृति' के आजीवन सदस्य बनकर जीवन पथ को पुष्पित, प्रफुल्लित और प्रमुदित करें। आपका चित्र पत्रिका में प्रकाशित होगा। आपके बहुमूल्य सुझावों का हम स्वागत करते हैं।

लेखकवृंद से अनुरोध है कि रचना मौलिक एवं अप्रकाशित हो, रचना का लेखन स्पष्ट और सुपाठ्य हो। दो प्रतियां उस रचनाकार को भेज दी जाएगी, जिनकी रचना प्रकाशित हुई है।

विज्ञापन दर

पिछला कवर पृष्ठ	:	5100 रुपये
कवर पृष्ठ नं.-2	:	3100 रुपये
कवर पृष्ठ नं.-3	:	2500 रुपये
पूरा पृष्ठ अंदर	:	1000 रुपये
आधा पृष्ठ अंदर	:	600 रुपये

'विश्ववारा संस्कृति' में सभी पद अवैतनिक हैं। प्रकाशित विचारों से संपादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है। सभी विवादों का न्याय क्षेत्र गौतमबुद्धनगर होगा।

संपादकीय कार्यालय

आर्य समाज, बी-69,
सेक्टर-33, नोएडा- 201301
गौतमबुद्धनगर, (उ.प्र.)
दूरभाष : 0120-2505731,
9871798221, 7011279734
captakg21@yahoo.co.in

Web : www.aryasamajnoida.org, E-mail : info.aryasamajnoida33@gmail.com

संपादकीय...

।।ओ३म्।।

संस्कृत का पठन-पाठन अनिवार्य हो

स्वभाषा, स्वसंस्कृति, स्वमातृभूमि का सम्मान सर्वोपरि होना चाहिए

सर्वभाषाओं की जननी संस्कृत भाषा है। संस्कृत की वैज्ञानिकता को सम्पूर्ण विश्व ने स्वीकार कर लिया है। संस्कृत भाषा का कोष सबसे समृद्ध कोष है। हाथी के पर्यायवाची शब्द ही लगभग सौ हैं। संस्कृत भाषा अपने नियमों एवं व्याकरण के कारण विकारों से रहित होती है। वेद उपनिषद, ब्राह्मण ग्रंथ, दर्शन, उपवेद, आयुर्वेद जैसे अद्भुत ग्रंथ संस्कृत भाषा में उपलब्ध हैं। संस्कृत भाषा के साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता है मानव निर्माण की शिक्षा प्रदान करना। यदि हम विश्व में सदाचार संस्कारों का विकास चाहते हैं तो हमें सम्पूर्ण विश्व में संस्कृत भाषा का प्रचार-प्रसार करना चाहिए। संस्कृत सम्भाषण करने वाले व्यक्तियों की स्मृति अच्छी रहती है। संस्कृत पढ़ने वाले व्यक्ति शांत-संतोषी रहते हैं।

संस्कृत विषयों के कुछ रोचक तथ्य- संस्कृत को सभी भाषाओं की जननी माना जाता है। संस्कृत उत्तराखंड की आधिकारिक भाषा है। अरब लोगों की दखलंदाजी से पहले संस्कृत भारत की राष्ट्रीय भाषा थी। नासा के मुताबिक, धरती पर बोली जाने वाली सबसे स्पष्ट भाषा है। संस्कृत में दुनिया की किसी भी भाषा से ज्यादा शब्द है। वर्तमान में संस्कृत के शब्दकोष में 102 अरब 78 करोड़ 50 लाख शब्द है। संस्कृत किसी भी विषय के लिए एक अद्भुत खजाना है। नासा के पास संस्कृत में ताड़पत्रों पर लिखी 60,000 पांडुलिपियां है जिन पर नासा रिसर्च कर रहा है। फ़ोबर्स मैगज़ीन ने जुलाई 1987 में संस्कृत को Computer Software के लिए सबसे बेहतर भाषा माना था। किसी और भाषा के मुकाबले संस्कृत में सबसे कम शब्दों में वाक्य पूरा हो जाता है। संस्कृत दुनिया की अकेली ऐसी भाषा है जिसे बोलने में जीभ की सभी मांसपेशियों का इस्तेमाल होता है।

अमेरिकन हिंदू यूनिवर्सिटी के अनुसार संस्कृत में बात करने वाले मनुष्य का बीपी, मधुमेह, कोलेस्ट्रॉल आदि रोग से मुक्त हो जाएगा। संस्कृत में बात करने से मानव शरीर का तंत्रिका तंत्र सदा सक्रिय रहता है जिससे कि व्यक्ति का शरीर सकारात्मक आवेश (Positive Charges) के साथ सक्रिय हो जाता है। संस्कृत स्पीच थेरेपी में भी मददगार है यह एकाग्रता को बढ़ाती है। कर्नाटक के मुत्तुर गांव के लोग केवल संस्कृत में ही बात करते हैं। सुधर्मा संस्कृत का पहला अखबार था, जो 1970 में शुरू हुआ था। आज भी इसका ऑनलाइन संस्करण उपलब्ध है। जर्मनी में बड़ी संख्या में संस्कृतभाषियों की मांग है। जर्मनी की 14 यूनिवर्सिटीज़ में संस्कृत पढ़ाई जाती है। नासा के वैज्ञानिकों के अनुसार जब वो अंतरिक्ष ट्रैवलर्स को मैसेज भेजते थे तो उनके वाक्य उलटे हो जाते थे। इस वजह से मैसेज का अर्थ ही बदल जाता था। उन्होंने कई भाषाओं का प्रयोग किया लेकिन हर बार यही समस्या आई। आखिर में उन्होंने संस्कृत में मैसेज भेजा क्योंकि संस्कृत के वाक्य उल्टे हो जाने पर भी अपना अर्थ नही बदलते हैं। जैसे-अहम् विद्यालयं गच्छामि। विद्यालयं गच्छामि अहम्। गच्छामिअहम् विद्यालयं। तीनों के अर्थ में कोई अंतर नहीं है।

■ **आचार्य डॉ. जयेन्द्र कुमार**

70वें गणतंत्र दिवस की हार्दिक शुभकामनाएं

आर्य समाज, आर्ष गुरुकुल, वानप्रस्थाश्रम नोएडा द्वारा समस्त जनों को गणतंत्र दिवस की हार्दिक शुभकामनाएं

- प्रबंध संपादक

वैदिक धर्म और संस्कृति

प्रबंध संपादक
आर्य कै. अशोक गुलाटी

प्राचीन आर्यों के धर्म में प्रथमत: प्राकृतिक देवमंडल की कल्पना है जो भारत में पाई जाती रही है। आर्यों का साम्राज्य समस्त विश्व में था। आर्यों के द्वारा समस्त देशों की व्यवस्थायें की जाती थी। ईरान, यूनान, रोम, जर्मनी आदि में आज भी आर्यों के वंश पाये जाते हैं। इसमें आकाश और पृथ्वी के बीच में अनेक देवताओं की सृष्टि हुई है।

आर्यों के मूल धर्म ग्रंथ ऋग्वेद में अभिव्यक्त है कि ईरान में बसे आर्य अवेस्ता में, यूनानियों का उलिसीज़ और ईलियद में। देवमंडल के साथ आर्य सिद्धांत का विकास हुआ जिसमें मंत्र, यज्ञ, अतिथि सत्कार आदि मुख्यत: सम्मिलित थे। आर्य आध्यात्मिक दर्शन (ब्रह्म, आत्मा, विश्व, मोक्ष आदि) और आर्य नीति का विकास भी समानांतर हुआ। शुद्ध नैतिक आधार पर अवलंबित परंपरा विरोधी अवैदिक संप्रदायों-बौद्ध, जैन आदि-ने भी अपने धर्म को आर्य धर्म अथवा सद्धर्म कहा। सामाजिक अर्थ में 'आर्य' का प्रयोग पहले संपूर्ण मानव के अर्थ में होता था। कभी-कभी इसका प्रयोग सामान्य जनता के लिए होता था। फिर अभिजात और श्रमिक वर्ग में अंतर दिखाने के लिए आर्य वर्ण और शूद्र वर्ण का प्रयोग होने लगा। फिर आर्यों ने अपनी सामाजिक व्यवस्था का आधार वर्ण को बनाया और समाज चार वर्णों में वृत्ति और श्रम के आधार पर विभक्त हुआ। ऋक्संहिता में चारों वर्णों की उत्पत्ति और कार्य का उल्लेख इस प्रकार है-

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पदभ्यां शूद्रोऽजायत॥

(इस विराट् पुरुष के मुंह से ब्राह्मण, बाहु से राजस्व (क्षत्रिय), उरु (जंघा) से वैश्य और पद (चरण) से शूद्र उत्पन्न हुआ)। यह एक अलंकारिक वाक्य है। ब्रह्म तो अनंत है। उस ब्रह्म के सद् विचार, सद् प्रवृत्तियां, आस्तिकता जिस जनसमुदाय से अभिव्यक्त होती है उसे ब्राह्मण कहा गया है। शौर्य और तेज जिस जन समुदाय से अभिव्यक्त होता है वह क्षत्रिय वर्ग और इसके अतिरिक्त संसार को चलाने के लिए आवश्यक क्रियायें जैसे कृषि वाणिज्य, ब्रह्म, वैश्य भाग से अभिव्यक्त होती हैं। इसके अतिरिक्त भी अनेक कार्य बच जाते है जिनकी मानव जीवन में महत्ता बहुत अधिक होती है जेसे दस्तकारी, शिल्प, वस्त्र निर्माण, सेवा क्षेत्र, ब्रह्म अपने शूद्र वर्ग द्वारा अभिव्यक्त करता है।

आजकल की भाषा में यह वर्ग बौद्धिक, प्रशासकीय, व्यावसायिक तथा श्रमिक थे। मूल में इनमें तरलता थी। एक ही परिवार में कई वर्ण के लोग रहते और परस्पर विवाहादि संबंध और भोजन, पान आदि होते थे। क्रमश: यह वर्ग परस्पर वर्जनशील होते गये। यह सामाजिक विभाजन आर्यपरिवार की प्राय: सभी शाखाओं में पाए जाते हैं, यद्यपि इनके नामों और सामाजिक स्थिति में देशगत भेद मिलते हैं। प्रारंभिक आर्य परिवार पितृसत्तात्मक था, यद्यपि आदित्य, दैव आदि शब्दों में मातृसत्ता की ध्वनि वर्तमान हैं। दंपती की कल्पना में पति-पत्नी का गृहस्थी के ऊपर समान अधिकार पाया जाता है। परिवार में पुत्रजन्म की कामना की जाती थी।

प्रारंभिक आर्य परिवार पितृसत्तात्मक था, यद्यपि आदित्य, दैव आदि शब्दों में मातृसत्ता की ध्वनि वर्तमान है। दम्पति की कल्पना में पति-पत्नी का गृहस्थी के ऊपर समान अधिकार पाया जाता है। परिवार में पुत्रजन्म की कामना की जाती थी। दायित्व के कारण कन्या का जन्म परिवार को गंभीर बना देता था, किंतु उसकी उपेक्षा नहीं की जाती थी

दायित्व के कारण कन्या का जन्म परिवार को गंभीर बना देता था, किंतु उसकी उपेक्षा नहीं की जाती थी।

घोषा, लोपामुद्रा, अपाला, विश्ववारा आदि स्त्रियां मंत्रद्रष्टा ऋषि पद को प्राप्त हुईं थीं। विवाह प्राय: युवावस्था में होता था। पति-पत्नी को परस्पर निर्वाचन का अधिकार था। विवाह धार्मिक कृत्यों के साथ संपन्न होता था, जो परवर्ती ब्रह्म विवाह से मिलता-जुलता था।

प्रारंभिक वैदिक संस्कृति में विद्या, साहित्य और कला का ऊंचा स्थान है। भारोपीय भाषा ज्ञान के सशक्त माध्यम के रूप में विकसित हुई। इसमें काव्य, धर्म, दर्शन आदि विभिन्न शास्त्रों का उदय हुआ। आर्यों का प्राचीनतम साहित्य वेद भाषा, काव्य और चिंतन, सभी दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। ○○

प्रजापते न त्वदेता...

इस अंक से ईश्वर स्तुति, प्रार्थना, उपासना के छठवें मंत्र की व्याख्या प्रस्तुत की जा रही है, मनन चिन्तन कर जीवन सफल करें।

- प्रबंध संपादक

(गतांक से आगे...)

स्व. प्रो. उमाकान्त उपाध्याय

पक्षमा की प्रार्थनाएं ऐतिहासिक रूप से नयी है। सम्भवत: पौराणिक काल में ईसाई-मुसलमानों की लागडॉट में इस अपसिद्धांत का प्रचार-प्रभाव भारतवर्ष में भी अधिक बढ़ गया। जैसे जैनियों और बौद्धों के साथ लागडॉट में मूर्ति और मंदिर की सांस्कृतिक यात्रा उत्कर्ष को प्राप्त कर गई, उसी प्रकार ईसाई-मुसलमानों की प्रतिद्वंद्विता में पाप क्षमा जैसे अपसिद्धांत खूब पल्लवित हुए। ईसा सब का पाप लेकर फांसी लटक गये, मुसलमान तोबा करके छुट्टी ले लेते हैं। जब लागडॉट हो रही है तो हिंदू संत क्यों पीछे रहते? उन्होंने कहा-

'एक हरी नाम जेतो पाप हरै, पापी साध्य नाहीं तो पाप करै।' 'गंगा-गंगेति यो ब्रूयाद् योजनानां शतैरपि, मुच्यते सर्व पापेभ्यो विष्णु लोकं च गच्छति।।'

वस्तुत: अपने पाप पुण्य का उत्तरदायी स्वयं है और उसे अच्छा बुरा अपने कर्मों के अनुसार स्वयं भोगना पड़ता है। परमेश्वर या कोई अन्य देवी देवता, नदी तीर्थ, किसी भी व्यक्ति के पाप पुण्य में कुछ लेनदेन, कमवेश नहीं करते। श्रीकृष्ण गीता में कह रहे हैं-

'नादत्ते कस्यचित् पापं, न चैवसुकृतं विभु:। अज्ञानेनावृतं ज्ञानं, तेन मुह्न्ति जन्तव:।' गी. ५-१५

अर्थात् परमेश्वर न किसी का पाप लेते हैं और न हीं पुण्य। मनुष्य का ज्ञान जब अज्ञान से ढक जाता है तो मनुष्य मोहमाया, पाप क्षमा आदि अपसिद्धांतों में फंस जाता है।

मूलरूप से हम यह विचार कर रहे थे कि प्रार्थना में हम क्या कामना करें? प्रभु से हम क्या याचना करें? इस प्रश्न को स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने भी सत्यार्थ प्रकाश में उठाया है-

पूर्व पक्ष- क्या स्तुति आदि करने से ईश्वर अपना न्याय छोड़, स्तुति-प्रार्थना करने वाले का पाप छुड़ा देगा?

उत्तर-नहीं। पूर्व- तो फिर स्तुति प्रार्थना क्यों करना है? उत्तर- स्तुति से ईश्वर में प्रीति, उसके गुणकर्म-स्वभाव से अपने गुण-कर्म-स्वभाव का सुधारना, प्रार्थना से निरभिमानता, उत्साह और सहाय का मिलना, उपासना से परब्रह्म से मेल और उसका साक्षात्कार होना।'

स्तुति के फल के संबंध में स्वामी जी लिखते हैं- 'इसका फल यह है कि जैसे परमेश्वर के गुण-कर्म स्वभाव हैं, वैसे गुण-कर्म स्वभाव अपने भी करना। जैसे वह न्यायकारी है तो आप भी न्यायकारी होवें। और जो केवल भॉड़ के समान परमेश्वर के गुण-कीर्तन करता जाता और अपने चरित्र नहीं सुधारता उसका स्तुति करना व्यर्थ है।'

प्रार्थनाएं किस प्रकार की करें, इस संबंध में वेदों में हजारों हजार मंत्र भरे पड़े हैं। दो चार यहां बानगी के रूप में प्रस्तुत हैं- १. प्रसिद्ध गायत्री मंत्र में 'धियो यो न: प्रचोदयात्' भगवान हमारी बुद्धि को शुभ मंगल कार्यों में प्रेरित करें। २. विश्वानिदेव मंत्र में 'दुरितानि परासुव, यद भद्रं तन्न आसुव' हे जगदीश्वर मेरे दुरित-दुर्गुण, दुष्ट कर्म-दुष्ट स्वभाव को दूर कर दीजिए और जो कल्याणकारक गुण कर्म और स्वभाव है उन्हें हमें प्राप्त

परमेश्वर न किसी का पाप लेते हैं और न ही पुण्य। मनुष्य का ज्ञान जब अज्ञान से ढक जाता है तो मनुष्य मोहमाया, पाप-क्षमा आदि अपसिद्धांतों में फंस जाता है। मूलरूप से हम यह विचार कर रहे थे कि प्रार्थना में हम क्या कामना करें? प्रभु से हम क्या याचना करें? इस प्रश्न को स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने भी सत्यार्थ प्रकाश में उठाया है- पूर्व पक्ष- क्या स्तुति आदि करने से ईश्वर अपना न्याय छोड़, स्तुति-प्रार्थना करने वाले का पाप छुड़ा देगा? उत्तर-नहीं। पूर्व- तो फिर स्तुति प्रार्थना क्यों करना है? उत्तर- स्तुति से ईश्वर में प्रीति, उसके गुण-कर्म-स्वभाव से अपने गुण-कर्म-स्वभाव का सुधारना, प्रार्थना से निरभिमानता, उत्साह और सहाय का मिलना, उपासना से परब्रह्म से मेल और उसका साक्षात्कार होना।' स्तुति के फल के संबंध में स्वामी जी लिखते हैं- 'इसका फल यह है कि जैसे परमेश्वर के गुण-कर्म-स्वभाव हैं, वैसे गुण-कर्म-स्वभाव अपने भी करना। जैसे वह न्यायकारी है तो आप भी न्यायकारी होवें। और जो केवल भॉड़ के समान परमेश्वर के गुण-कीर्तन करता जाता और अपने चरित्र नहीं सुधारता उसका स्तुति करना व्यर्थ है।'

कराइये। ३. शिव संकल्प सूक्त में 'तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु' हे प्रभो मेरा मन शिव संकल्पों वाला बना दीजिए। ४. 'अग्ने नय सुपथा' हे अग्ने परमेश्वर! हमें सुपथ पर ले चलिए। ५. असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्माऽमृतं गमय- 'हे परमगुरो परमात्मन्। आप हमें असत् मार्ग से पृथक पर सन्मार्ग में प्राप्त कीजिए, अविद्यान्धकार को छुड़ाके विद्यारूप सूर्य को प्राप्त कीजिए और मृत्युरोग से पृथक करके मोक्ष के आनंद रूप अमृत को प्राप्त कीजिए।'

'जो मनुष्य जिस बातकी प्रार्थना करे, उसे वैसा ही वर्तमान भी करना चाहिए। अर्थात् जैसे सर्वोत्तम बुद्धि की प्राप्ति के लिए परमेश्वर की प्रार्थना करे तो उसके लिए जितना अपने से प्रयत्न हो सके उतना किया करे अर्थात् अपने पुरुषार्थ के उपरांत प्रार्थना करनी योग्य है।' स्वामी जी लिखते हैं कि ऐसी प्रार्थना कभी नहीं करनी चाहिए कि भगवान् मेरे शत्रुओं का नाश हो जाय, मेरे अधीन सब हो जाये, मैं सबसे बड़ा हो जाऊं इत्यादि।

प्रभु भिखारियों को खिलाने के लिए खिचड़ी पका के बांटने नहीं आते। न ही वह आलसियों के लिए सदावर्त बंटवाता है। प्रभु का तो आदेश है- **'कुर्वन्नेवेहि कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः'** काम करते हुए, क्रियाशील होकर सौ वर्ष जीने की, शतायु होने की कामना करे। सदा शुभ, मंगलमयी, कल्याणकारी कामनाएं करता हुआ प्रार्थना करनी चाहिए।

वयं स्याम पतयो रयीणाम् : हम 'रयिओं, (बहुवचन) के पति- स्वामी, पालक, रक्षक होवें। पहले 'रयि' पर विचार करें। ऋषि ने अर्थ किया है, 'हम धन ऐश्वर्यों के स्वामी होवें'। यहां ऐश्वर्य भी बहुबचन में प्रयुक्त है। ऐश्वर्य , ईश्वरत्व, ईश्वरता, ईश्वरभाव को कहते हैं। पुत्र-पौत्र, धन, धान्य, नाम, प्रसिद्धि-प्रतिष्ठा, सम्मान सभी को ऐश्वर्यों में गिनते हैं।

धन शब्द का प्रयोग अनेक प्रकार की सम्पन्नताओं में होता है। रुपये-पैसे, सोना-चांदी, जगह-जमीन के अतिरिक्त अधिक उच्चभावों में धन शब्द का प्रयोग होता आ रहा है। 'तपोधन, यशोधन, विद्याधन' आदि साहित्य के सुलभ प्रयोग हैं। रयिओ (रयीणाम्) के स्वामी हों। इस प्रयोग की भी थोड़ी खोज करें। अंततः रयि का जब बहुवचन में प्रयोग मंत्र में ही है तो खोजना चाहिए कि रयि के विभिन्न स्वरूप क्या हैं? सम्पूर्ण न भी सही, कुछ प्रयोग निम्न प्रमाणों में द्रष्टव्य है- १. रयिरिति धननाम सु पठितम्- (निघ. २-१०) २. वीर्यं वै रयिः- (शत. ब्रा. १३-४-२-१३) ३. पुष्टं वै रयिः- (शत. ब्रा. २-३,४,१३) ४. पशवो वै रयिः- (तै. १-४-४-९) इस प्रकार के रयि के अनेकों रूप, धन के अनेकों रूप सरलता से समझ में आते हैं।

विद्याधन, यशोधन, तपोधन, मन को अधिक शक्ति से अपनी ओर खींचते हैं। किंतु सामान्य प्रचलित अर्थ में, रुपये-पैसे, वित्त, अर्थ आदि अर्थों में भी, धन का बहुत महत्व है। 'अर्थकरी च विद्या' विद्या की भी सामान्य उपयोगिता तभी हो पाती है जब वह अर्थ के उपार्जन में कृतकार्य हो, सहयोगी हो। कैसा भी विद्वान् हो, यदि वह दरिद्रता के प्रहार के कारण जर्जर हो रहा है तो उसकी विद्या की स्थिति 'रूपवती भिखारिन' जैसी ही हो जाती है। कहावत भी है- **'बुभुक्षितै र्व्याकरणन्न भुज्यते, न पीयते काव्य रसः पिपासुभिः।'** भूखा व्यक्ति व्याकरण की मात्रायें नहीं खायेगा और प्यासे व्यक्ति की प्यास भी काव्य रस से कभी भी न बुझ सकेगी। भोजन वस्त्र अवास के साथ भी सुख सुविधा के लिए रुपये पैसे धन सम्पत्ति की महती आवश्यकता रहती है। यह ठीक है कि- **'न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्यः।'**

धन से किसी मनुष्य की तृप्ति नहीं होती और 'अर्थ परस्य धर्म।' (नश्यति)। जो केवल अर्थ पर हो जाता है, केवल रुपयों के पीछे भागता फिरता है, उसका धर्म नष्ट हो जाता है। फिर भी अर्थ धन की महिमा, उसकी आवश्यकता को झुठलाया नहीं जा सकता। धन तो विद्या धन भी है।

'विद्या ददाति विनयम्, विनयात् याति पात्रताम्। पात्रत्वाद् धनमाप्नोति धनाद् धर्मं ततः सुखम्।

विद्या से मनुष्य विनयी बनता है, विनय के कारण वह सुपात्र बन जाता है। सुपात्रता धन देती है और धन से धर्म करता है। धर्म करने से सुख मिलता है। इससे भी उच्च तपोधन होता है। किंतु 'अभिज्ञान शाकुंतलम्' के दुर्वासा अभिमानी-अहंकारी विचारमूढ़ होकर निष्पाप सरल शकुन्तला से अप्रसन्न होकर कहते हैं- **'तपोधनं वेत्सि न मामुपस्थितम्'।** कालीदास ने 'रघुंवश' के दिलीप को 'यशोधन कहकर स्मरण किया- **'यशोधनो धेनुमृषेर्मुमोच'।** यशोधन दिलीप ने ऋषि की गाय को चराने के लिए खोला।

(शेष अगले अंक में) ○○

सुधी पाठकों से आत्म निवेदन

कृपया अपने विचारों से अवश्य अवगत करावें ताकि पत्रिका को और सुरुचिपूर्ण बनाने का प्रयास किया जाए।

■ **प्रबंध संपादक : 9871798221**

भगवद्गीता और धर्म

डॉ. दीवान चन्द, डी.लिट.

(गतांक से आगे...)

नेतृत्व का स्थान : जीवन गति है, परंतु यह सब मनुष्यों के लिए एक रूप की गति नहीं। कुछ कोल्हू के बैल की तरह एक संकुचित चक्कर काटने में जीवन व्यतीत कर देते हैं, कुछ आगे बढ़ने के स्थान पर पीछे सरकते रहते हैं। सफल जीवन का अर्थ यह है कि व्यक्ति आगे बढ़े और ऊपर उठे। पर्वतों पर चढ़ते हुए हम आगे भी बढ़ते हैं और ऊपर भी उठते हैं। समाज में सभी पुरुषों की स्थिति एक जैसी नहीं होती।

कुछ नेतृत्व करते हैं, अधिक संख्या अनुयायियों की होती है। यह भेद आरम्भ में परिवार में व्यक्त होता है, बच्चे के लिए उसका पिता अनुसरण के योग्य नमूना होता है। उसे निरंतर यह पता लगता रहता है कि पिता का ज्ञान और उसकी शक्ति उसके अपने ज्ञान और शक्ति से बहुत अधिक होते हैं। घर में पिता का शासन तो चलता ही है, वह अपने प्रेम के कारण श्रद्धा और सत्कार का विषय भी बनता है। अगली मंजिल में शिक्षक की यह स्थिति होती है। गृहस्थों के लिए स्वीकृत नेता पथ प्रदर्शक होते हैं।

गीता (३:२१) में इस महत्वपूर्ण तथ्य की बाबत कहा है- जैसा-जैसा श्रेष्ठ पुरुष आचरण करता है, दूसरे पुरुष भी वैसा ही करते हैं, जो कुछ वह (श्रेष्ठ पुरुष) प्रमाण कर देता है, लोग उसके अनुसार बर्तते हैं।

वर्तमान काल में भारत के जीवन में सबसे व्याकुल करने वाली बात यह है कि जो लोग नेतृत्व कर रहे हैं, उनके कथन और आचरण में कोई समानता नहीं। हरेक राष्ट्रीय एकता की महिमा गाता है, परंतु अपने स्थानीय झगड़ों में एकता का अर्थ यही समझता है कि उसे नेता मान लिया जाये और दूसरे अनुयायी होने पर संतुष्ट हो जायें।

हरेक चीख रहा है कि देश में भ्रष्टाचार बहुत बढ़ गया है, परंतु ऐसी चीख पुकार करने वालों में अधिक संख्या की शिकायत यह होती है कि उन्हें व्यापक लूट में पर्याप्त भाग नहीं मिला।

जनता के नैतिक स्तर को ऊंचा करने के लिए श्रेष्ठ पुरुषों के नेतृत्व की आवश्यकता होती है, इस नेतृत्व का दुर्भाग्य से अभाव सा हो रहा है। सामाजिक जीवन में यह सबसे बड़ी समस्या है। युवकों की बाबत कहा जाता है कि उनके सामने कोई आदर्श नहीं। आदर्श चीलों के साथ आकाश में नहीं उड़ते, इन्हें तो उन लोगों के जीवन में देखना होता है, जो किसी तरह आकाश में आ गये हैं।

कृष्ण का पद : हमारे पथ प्रदर्शकों में ऐसे भी होते हैं, जो अपना काम करके हमारी दृष्टि से ओझल हो गये हैं। उनमें कुछ एक युग के नहीं, अपितु युगों के महाजन हो जाते हैं। उत्तर भारत में राम और कृष्ण ऐसे महाजन समझे जाते हैं। दुर्भाग्य से दोनों को अवतार मानकर उनकी पथ प्रदर्शक-स्थिति को समाप्त सा कर दिया गया है।

मेरे लिए वह मनुष्य पथप्रदर्शक हो सकता है, जिसका अनुसरण करना मेरे लिए संभव है, जिसके साथ चलकर मैं गंतव्य तक पहुंच सकता हूं। जिस व्यक्ति ने दिव्य स्थिति से कुछ समय के लिए मानव आकृति धारण की है, वह तो मुझसे इतना दूर है कि मैं उसका अनुकरण कर ही नहीं सकता।

भगवद्गीता (४:७,८) में कृष्ण अपने पद की बाबत कहते हैं- 'जब-जब धर्म की ग्लानि और अधर्म की वृद्धि होती है, तब-तब मैं अपने आपको मनुष्य रूप में प्रगट करता हूं।

साधु पुरुषों के उद्धार के लिए, बुरे कर्म करने वालों के विनाश के

सफल जीवन का अर्थ यह है कि व्यक्ति आगे बढ़े और ऊपर उठे। पर्वतों पर चढ़ते हुए हम आगे भी बढ़ते हैं और ऊपर भी उठते हैं। समाज में सभी पुरुषों की स्थिति एक जैसी नहीं होती। कुछ नेतृत्व करते हैं, अधिक संख्या अनुयायियों की होती है। यह भेद आरम्भ में परिवार में व्यक्त होता है, बच्चे के लिए उसका पिता अनुसरण के योग्य नमूना होता है। उसे निरंतर यह पता लगता रहता है कि पिता का ज्ञान और उसकी शक्ति उसके अपने ज्ञान और शक्ति से बहुत अधिक होते हैं। घर में पिता का शासन तो चलता ही है, वह अपने प्रेम के कारण श्रद्धा और सत्कार का विषय भी बनता है। अगली मंजिल में शिक्षक की यह स्थिति होती है। गृहस्थों के लिए स्वीकृत नेता पथ प्रदर्शक होते है।

लिए, धर्म की फिर स्थापना करने के लिए मैं युग-युग में प्रगट होता हूं।

संभवत: ये दो श्लोक गीता के प्रथम भाग में सबसे अधिक प्रसिद्ध है। जब मैं इन्हें पढ़ता हूं तो मेरे मन में कई विचार उठते हैं। उनमें कुछ ये हैं-१. इतिहास के तत्व ज्ञान के संबंध में कृष्ण का दृष्टिकोण क्या है? २. धर्म और अधर्म के संग्राम में साधारण मनुष्यों का भाग क्या है? ३. कृष्ण के दावे की निष्पक्ष जांच क्या बताती है? इन विचारों को इसी क्रम में लें।

इतिहास का तत्व ज्ञान : समाचार के एक पृष्ठ पर २० समाचार प्रकाशित होते हैं, प्रांत के कुछ भागों में सूखे से बहुत हानि हुई है, एक स्थान पर दो गाड़ियों की टक्कर लगते-लगते रुक गयी, राजधानी में एक गोष्ठी समाप्त हो गयी, उत्तर प्रदेश में राजनैतिक शांति वार्ता असफल रही इत्यादि।

समाचार लिखने वाला इन्हें भिन्न क्रम में लिख सकता था। क्या किसी उपन्यास के अध्यायों का क्रम भी ऐसे ही बदला जा सकता है, या इस परिवर्तन में उसका अर्थ ही लोप हो जाता है? एक विचार के अनुसार इतिहास की घटनाएं समाचार स्तम्भ के समाचारों की तरह किसी भिन्न क्रम में भी हो सकती थी, यह इत्तिफाक है कि वे उस क्रम में हुई जिसमें की हुई दूसरे विचार के अनुसार इतिहास उपन्यास या नाटक से मिलता है, हरेक भाग आने वाले भाग के लिए मार्ग खोलता है।

इतिहास एक प्रगति है, जिसके स्वरूप की बाबत हम चिंतन कर सकते हैं। विकासवाद के अनुसार इतिहास विकास कथा है। हर्वर्ट स्पेन्सर के अनुसार स्वार्थ और सेर्वार्थ में निरंतर संग्राम होता है। विकास के साथ सेर्वार्थ का बल बढ़ता जाता है। वह समय अवश्य आयेगा जब दूसरों का हित व्यक्ति की प्रकृति ही बन जायेगा। ऐसी स्थिति आने पर हर प्रकार के अभद्र का अभाव हो जायेगा। मानव जाति का भविष्य उज्जवल है।

जर्मनी के दार्शनिक हेगल के विचार में वास्तविकता और बुद्धि-अनुकूलता एक ही वस्तु है। मनुष्य के उद्वेग संग्राम में जुटे रहते हैं, अंत में वे बुद्धि की प्रधानता को स्थापित करते हैं। यह प्रधानता व्यक्ति की स्वाधीनता है। इतिहास इस दिशा में निरंतर प्रगति है। इस संबंध में कृष्ण का मत क्या है?

धर्म और अधर्म में संग्राम होता रहता है। धर्म की शक्ति अधर्म की शक्ति से कम है। इसका परिणाम यह होता है कि धर्म गढ्ढे में जा गिरता है, और अधर्म शिखर पर जा पहुंचता है। जब स्थिति इतनी बिगड़ जाती है, तो कृष्ण दिव्यलोक से कुछ काल के लिए पृथिवी पर आता है, और फिर धर्म की प्राथमिकता को स्थापित करता है। उसके जाने पर फिर वही कथा दुहराई जाती है, धर्म पराजित होता है और अधर्म की विजय होती है। फिर कृष्ण आता है और यह क्रम जारी रहता है। यह एक अभद्रवादी दृष्टिकोण है। धर्म और अधर्म के संग्राम में धर्म की अपनी शक्ति तुच्छ है। यह अपनी रक्षा नहीं कर सकता, किसी और की रक्षा क्या करेगा?

धर्म की शक्ति अधर्म की शक्ति से कम है। इसका परिणाम यह होता है कि धर्म गढ्ढे में जा गिरता है, और अधर्म शिखर पर जा पहुंचता है। जब स्थिति इतनी बिगड़ जाती है, तो कृष्ण दिव्यलोक से कुछ काल के लिए पृथिवी पर आता है, और फिर धर्म की प्राथमिकता को स्थापित करता है। उसके जाने पर फिर वही कथा दुहराई जाती है, धर्म पराजित होता है और अधर्म की विजय होती है। फिर कृष्ण आता है और यह क्रम जारी रहता है। यह एक अभद्रवादी दृष्टिकोण है। धर्म और अधर्म के संग्राम में धर्म की अपनी शक्ति तुच्छ है। यह अपनी रक्षा नहीं कर सकता, किसी और की रक्षा क्या करेगा?

धर्म अधर्म के युद्ध में साधारण मनुष्यों का भाग : धर्म और अधर्म का युद्ध कुरुक्षेत्र और अन्य क्षेत्रों में होता है, प्रत्येक हृदय भी इस युद्ध का क्षेत्र है। दैवी और आसुरी वृत्तियां विजयी होने का यत्न करती रहती हैं। बाहर का युद्ध अंदर के युद्ध का Projection प्रतिरूप ही होता है। प्रत्येक बुद्धिमान को देखना होता है कि वह धर्म की वृद्धि और अधर्म की ग्लानि में क्या योग दे सकता है।

प्रगतिशील देशों में समझा जाता है कि प्रत्येक समस्या से निपटना उनका काम है। भारत में बहुतेरे आत्मनिर्भरता के अभाव में कृष्ण के अवतरण की प्रतीक्षा करते हैं। यह भावना कि हमसे कुछ बन नहीं पड़ता, हीनता के भाव को पैदा करती है। अन्य देशों के लोग अपने उत्तरदायित्व को ऐसी आसानी से एक ओर नहीं रख सकते।

(शेष अगले अंक में) ○○

वेदों का स्वाध्याय
सभी मनुष्यों का मुख्य कर्तव्य

मनमोहन कुमार आर्य
देहरादून, उत्तराखंड

मनुष्यों के अनेक कर्तव्यों में से एक कर्तव्य वेदों के सत्यस्वरूप को जानना व उनका नियमित स्वाध्याय करना है। वेदों का स्वाध्याय मनुष्य का कर्तव्य इसलिये है कि वेद संसार का सबसे पुराना व प्रथम ज्ञान है। यह वेदज्ञान मनुष्यों द्वारा अपने पुरुषार्थ से अर्जित ज्ञान नहीं है अपितु सृष्टि के आरम्भ में अमैथुनी सृष्टि में उत्पन्न आदि ऋषियों को सर्वव्यापक ईश्वर से प्राप्त ज्ञान है जिसे ईश्वर ने चार ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा को उनके हृदय स्थित चेतन-आत्मा में प्रेरणा के द्वारा दिया गया था। अध्ययन करने पर पुष्टि होती है कि वेद ईश्वर प्रदत्त ज्ञान है। इसके लिये ऋषि दयानन्द ने 'सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ' में विस्तृत तर्क व युक्तियां दी हैं। इनका अध्ययन करने पर यह निश्चित होता है कि वेद मनुष्य की रचना नहीं अपितु ईश्वरीय ज्ञान है और जो ऋषि दयानन्द ने वेद ज्ञान के आविर्भाव के विषय में कहा है वह सर्वथा सत्य एवं प्रामाणिक है।

सृष्टि की रचना अनादि व नित्य, सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ एवं सर्वान्तर्यामी सत्ता परमात्मा ने सृष्टि में विद्यमान असंख्य वा अनन्त जीवों को सुख व बन्धनों से मुक्त कर आनन्द से परिपूर्ण मोक्ष प्रदान करने के लिये की है। परमात्मा ज्ञानस्वरूप है। वह सर्वज्ञ है। वह सृष्टि व ज्ञान विषयक प्रत्येक्क बात को सूक्ष्मता, व्यापकता व समग्रता से जानता है। उसका ज्ञान नैमित्तिक नहीं अपितु नित्य एवं अनादि है। हमारी यह जो सृष्टि दृष्टिगोचर होती है यह प्रवाह से अनादि है। ईश्वर इससे पूर्व अनन्त बार ऐसी सृष्टि की रचना कर चुका है और भविष्य में भी सृष्टि रचना व प्रलय का चक्र जारी रहेगा। ईश्वर द्वारा सृष्टि बनाने और अल्प ज्ञान व अल्प बलयुक्त जीवों को सृष्टि की आदि काल में वेदों के समान ज्ञान देना उसका कर्तव्य निश्चित होता है।

यदि ईश्वर आदि सृष्टि में ऋषियों के द्वारा मनुष्यों को ज्ञान न देता तो मनुष्य भाषा आदि का स्वमेव निर्माण न करने के कारण अज्ञानी रहते। जिस प्रकार कुम्हार मिट्टी से घड़ा बनाता है परन्तु मिट्टी को वह नहीं बनाता और न बना सकता है, उसी प्रकार मनुष्य ईश्वर प्रदत्त भाषा 'वेदों की संस्कृत' में विकार कर नई भाषा तो बना सकता है परन्तु आदि भाषा 'वैदिक संस्कृत', उसकी वर्णमाला, शब्द व पद तथा व्याकरण नियमों में निबद्ध भाषा को नहीं बना सकता। ईश्वर का कर्तव्य था कि वह सभी जीवों को जो मनुष्य व इतर योनियों मे अपने पाप-पुण्य कर्मों का फल भोग रहे हैं, उन्हें सृष्टि के आरम्भ काल से उन्हें भाषा व ज्ञान प्रदान करता जिससे वह अपना जीवन सुगमता से व्यतीत कर सकें और ईश्वर ने ऐसा किया भी है। वेद ईश्वर प्रदत्त वही ज्ञान ही है।

मनुष्य का आत्मा चेतन पदार्थ है जिसमें ज्ञान ग्रहण करने तथा उसके

परमात्मा ज्ञानस्वरूप है, वह सर्वज्ञ है, वह सृष्टि व ज्ञान विषयक प्रत्येक बात को सूक्ष्मता, व्यापकता व समग्रता से जानता है। उसका ज्ञान नैमित्तिक नहीं अपितु नित्य एवं अनादि है। हमारी यह जो सृष्टि दृष्टिगोचर होती है यह प्रवाह से अनादि है। ईश्वर इससे पूर्व अनन्त बार ऐसी सृष्टि की रचना कर चुका है और भविष्य में भी सृष्टि रचना व प्रलय का चक्र जारी रहेगा। ईश्वर द्वारा सृष्टि बनाने और अल्प ज्ञान व अल्प बलयुक्त जीवों को सृष्टि की आदि काल में वेदों के समान ज्ञान देना उसका कर्तव्य निश्चित होता है। यदि ईश्वर आदि सृष्टि में ऋषियों के द्वारा मनुष्यों को ज्ञान न देता तो मनुष्य भाषा आदि का स्वमेव निर्माण न करने के कारण अज्ञानी रहते। जिस प्रकार कुम्हार मिट्टी से घड़ा बनाता है परन्तु मिट्टी को वह नहीं बनाता और न बना सकता है, उसी प्रकार मनुष्य ईश्वर प्रदत्त भाषा 'वेदों की संस्कृत' में विकार कर नई भाषा तो बना सकता है परन्तु आदि भाषा 'वैदिक संस्कृत', उसकी वर्णमाला, शब्द व पद तथा व्याकरण नियमों में निबद्ध भाषा को नहीं बना सकता।

अनुकूल व विपरीत कर्म करने की क्षमता है। ज्ञान से मनुष्य की उन्नति होकर उसे सुख प्राप्त होता है। अज्ञानी मनुष्य दु:ख उठाता है और ज्ञानी मनुष्यों को देखकर स्वयं भी उनके जैसा बनना चाहता है। यह स्वाभाविक व प्राकृतिक प्रवृत्ति है। वेद ईश्वर प्रदत्त ज्ञान होने से सर्वांश में सत्य एवं मनुष्यों के जानने योग्य व आचरण करने के योग्य है। वेदों का अध्ययन करने से ईश्वर, जीवात्मा तथा सृष्टि का ज्ञान होने सहित मनुष्यों को अपनी उन्नति करने की प्रेरणायें प्राप्त होती है। मनुष्य जीवन का चरम लक्ष्य मोक्ष है।

मोक्ष दु:खों की सर्वथा निवृत्ति को कहते हैं ओर मोक्ष अवस्था प्राप्त होने पर वेद व ऋषियों के ग्रन्थों से इस पर जो प्रकाश पड़ता है उसके अनुसार मनुष्य मोक्ष प्राप्त कर जन्म व मरण के दु:ख व सुख रूपी बन्धनों से मुक्त होकर पूर्ण आनन्द की अवस्था को प्राप्त होता है। इसका रहस्य यह है कि ईश्वर आनन्दस्वरूप है जो कि दु:खों से सर्वथा रहित है। मोक्ष में जीवात्मा के ईश्वर का सान्निध्य, संगति व व्यापक-व्याप्य संबंध बना रहता है जिससे ईश्वर का आनन्द व ज्ञान जीवात्मा को सुलभ होने से वह पूर्ण आनन्द की अवस्था में रहता है। अत: वेदों से मोक्ष प्राप्ति की प्रेरणा व उसे प्राप्त करने के साधन यथा ईश्वर का ज्ञान, उसकी उपासना, सद्कर्म, परोपकार, देश व समाज की सेवा, यम-नियम-आसन-प्राणायाम-प्रत्याहार-धारणा-ध्यान व समाधि द्वारा ईश्वर का साक्षात्कार कर जीवात्मा जन्म-मरण से मुक्त हो जाता है। इस मोक्ष की स्थिति को प्राप्त करने के लिये ही सृष्टि के आरम्भ से हमारे सभी ऋषि-मुनि-योगी आदि। वेदानुकूल सत्कर्मों को करके मोक्ष की प्राप्ति में सचेष्ट, सावधान व प्रयत्नरत रहते थे। यह वेदज्ञान की ईश्वर की मनुष्यों को सबसे बड़ी देन कही जा सकती है।

वेदों का अध्ययन इसलिये करना भी आवश्यक है कि इससे हम अपनी आत्मा व इसके सत्यस्वरूप को यथार्थ रूप में जानने के साथ अपने अनादि-अनन्त माता-पिता व सृष्टिकर्ता को भी तत्वत: जानते हैं। वेदों के बिना ईश्वर, जीवात्मा और सृष्टि के यथार्थ स्वरूप को नहीं जाना जा सकता। यदि हम ईश्वर और जीवात्मा आदि को यथार्थस्वरूप में नहीं जानेंगे तो हमें ईश्वर की उपासना के महत्व व उसकी विधि का ज्ञान नहीं होगा जिससे हम इनसे होने वाले नाना प्रकार के सुखों से वंचित हो जायेंगे। इसलिये भी वेदों व वैदिक साहित्य का अध्ययन करना प्रत्येक मनुष्य के लिए अत्यावश्यक है। वेदों का अध्ययन करने से हमें अग्निहोत्र-यज्ञ के स्वरूप तथा उसकी विधि का ज्ञान भी होता है। यज्ञ से मनुष्य अनजाने में होने वाले पापों से मुक्त होता है। यदि मनुष्य यज्ञ-अग्निहोत्र नहीं करेगा तो वह श्वास-प्रश्वास आदि से होने वाले वायु प्रदुषण सहित चूल्हे व चौके से होने वाले सूक्ष्म प्राणियों को दु:खों व प्रदुषण आदि से संबंधित पापों का निदान भी नहीं कर पायेगा। अन्य भी अनेक लाभ यज्ञ करने से होते हैं। वायु व वर्षा जल की शुद्धि से कृषि कार्यों को करके उत्तम अन्न की प्राप्ति यज्ञ-अग्निहोत्र से होती है। यज्ञ स्वास्थ्यवर्धक, रोगमुक्त करने सहित दीर्घायु प्रदान करने वाला होता है। यज्ञ से जड़ व चेतन देवों की पूजा सहित संगतिकरण एवं दान भी साथ-साथ होता है।

यज्ञ अग्निहोत्र का स्वरूप तो अल्प होता है परन्तु उससे लाभ अनेक होते हैं जिससे हमें अनेक सुखों की उपलब्धि होती है। यज्ञ विषयक अनेक ग्रन्थ उपलब्ध है जिसमें 'यज्ञ-मीमांसा' ग्रन्थ अत्यन्त लाभकारी है। यह ग्रन्थ वेदाचार्य आचार्य डॉ. रामनाथ वेदालंकार द्वारा रचित है जिसमें यज्ञ के प्राय: सभी पहलुओं पर सारगर्भित प्रकाश डाला गया है। वेदाध्ययन करने से हम सृष्टि विषयक यथार्थ ज्ञान को प्राप्त होते हैं जिससे हम परजन्मों में पशु-पक्षियों आदि नीच योनियों में जन्म लेकर उनमें होने वाले दु:खों से बच जाते हैं। ○○

प्रेरक विचार

- कामयाबी का जुनून होना चाहिए, फिर मुश्किलों की क्या औकात।
- किसी भी काम को करते समय अपने दिल, मन और आत्मा को उसमे जरूर लगायें, यही सफलता का रहस्य है।
- जिन्दगी में आशा करना कभी नहीं छोड़ना चाहिए, क्योंकि जीवन में चमत्कारों का होना कोई नई बात नहीं हैं।
- जीतने का मजा तब ही आता है, जब सभी आपके हारने का इंतजार कर रहे हो।
- जो मजिंलों को पाने की चाहत रखते हैं, वो समंदरों पर भी पत्थरों के पुल बना देते है।

आदर्श व्यक्तित्व वीर हनुमान

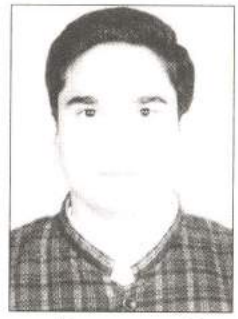

ओमकार शास्त्री
संस्कृत प्रवक्ता, आर्ष गुरुकुल, नोएडा

हनुमान जी के पिता राजा केशरी और माता अंजना एक उच्च व्यक्तित्व वाले तपस्वी थे। वीर हनुमान का जन्म झारखंड राज्य के गुमला जिले के ओजन नाम के निकट वन में एक गुफा में हुआ था। हजारों वर्ष पूर्व जन्में वीर हनुमान देशभक्त और मातृ-पितृ सेवक थे। गुरुकुलीय शिक्षा के समय ही उन्होंने पूर्ण ब्रह्मचर्य जीवन जीने का व्रत लिया और निभाया। ब्रह्मचर्य व्रत का ही परिणाम था कि वे अत्यंत बलवान थे। उनकी वीरता की गाथाएं आज भी लोग गाते हैं एवं उनके आदर्श व्यक्तित्व की पूजा की जाती है।

वीर हनुमान राजा सुग्रीव के राज्य में रहे और अपने कर्त्तव्य के प्रति हमेशा सजग रहे। महाराज सुग्रीव भी वीर हनुमान पर इतना भरोसा करते थे कि जब मर्यादा पुरुषोत्तम राम और लक्ष्मण को देखा तो वीर हनुमान को उनका रहस्य जानने के लिए भेजा। हनुमान जी ने उनको आसानी से पहचान लिया क्योंकि अच्छे और बुरे की पहचान पात्र ही कर सकता है। बाद में वीर हनुमान मर्यादा पुरुषोत्तम राम के विश्वासपात्र बने और विश्व में आज भी उनके सच्चे भक्त के रूप में पहचाने जाते हैं। माता सीता ने अपने दोनों पुत्रों लव और कुश से कहा था कि तुम दोनों से भी बड़ा मेरा पुत्र हनुमान है। देवी सीता और मर्यादा पुरुषोत्तम राम का प्रिय श्रेष्ठ व्यक्ति ही हो सकता है। दलित और मूर्ख नहीं हो सकता। जो लोग जाति की बात करते हैं, उन्हें यह पता नहीं वास्तविकता क्या है। चाहे वह अपने को बहुत बड़ा विद्वान मानते हों, उन्हें शायद यह पता नहीं कि उस समय आर्यावर्त में दो ही जातियां थीं- आर्य और अनार्य। आर्य श्रेष्ठ लोग और अनार्य जो वैदिक सिद्धांत नहीं मानने वाले। जातियों के संबंध में तो महर्षि मनु लिखते हैं- जन्मना जायते-शूद्रा कर्मणा द्विज् उच्यते।

अर्थात् मनुष्य कर्म से ही मूर्ख या विद्वान कहलाता है। वेदों का जानने वाला, गुरुकुल के ब्रह्मचारी मातृ-पितृ भक्त वीर हनुमान पर इस तरह राजनेताओं द्वारा टिप्पणी करना अशोभनीय है। हमें अपने महापुरुषों के सिद्धांतों पर कभी कोई टिप्पणी नहीं करनी चाहिए। हमें सदैव महापुरुषों के जीवन से शिक्षा लेनी चाहिए और उनके द्वारा दी गई शिक्षा से अपने जीवन को और उच्च पदों पर बैठे राजनेताओं को जनता को सुविधा प्रदान करनी चाहिए।

आज हमारी राजनीति इतनी गंदी हो गई है कि वोटों और सत्ता के लालच में हमारे किसी भी महापुरुष को जातीय बंधन में बांध देते है। यह हमारे देश के भविष्य के लिए शुभ संकेत नहीं है। कहा भी गया है- यथा राजा तथा प्रजा। यदि राजा वीर हनुमान या अन्य महापुरुषों के विषय में ऐसी बात करेगा तो प्रजा में अराजकता और महापुरुषों के प्रति भ्रम फैल जायेगा। इसलिए हम सभी महापुरुषों का सम्मान करें और उनके द्वारा बताये गये मार्ग का अनुसरण करें। वीर हनुमान वास्तव में एक महान दिव्य पुरुष थे, उनके आदर्श व्यक्तित्व को मानव जाति हमेशा याद रखेगी और उनके द्वारा किये अच्छे कार्यों का सदैव अनुसरण करेगी। ओ३म्!! ○○

वीर हनुमान मर्यादा पुरुषोत्तम राम के विश्वासपात्र बने और विश्व में आज भी उनके सच्चे भक्त के रूप में पहचाने जाते हैं। माता सीता ने अपने दोनों पुत्रों लव और कुश से कहा था कि तुम दोनों से भी बड़ा मेरा पुत्र हनुमान है। देवी सीता और मर्यादा पुरुषोत्तम राम का प्रिय श्रेष्ठ व्यक्ति ही हो सकता है। दलित और मूर्ख नहीं हो सकता। जो लोग जाति की बात करते हैं, उन्हें यह पता नहीं वास्तविकता क्या है। चाहे वह अपने को बहुत बड़ा विद्वान मानते हों, उन्हें शायद यह पता नहीं कि उस समय आर्यावर्त में दो ही जातियां थीं- आर्य और अनार्य। आर्य श्रेष्ठ लोग और अनार्य जो वैदिक सिद्धांत नहीं मानने वाले। जातियों के संबंध में तो महर्षि मनु लिखते हैं- जन्मना जायते-शूद्रा कर्मणा द्विज् उच्यते। अर्थात् मनुष्य कर्म से ही मूर्ख या विद्वान कहलाता है। वेदों का जानने वाला, गुरुकुल के ब्रह्मचारी मातृ-पितृ भक्त वीर हनुमान पर इस तरह राजनेताओं द्वारा टिप्पणी करना अशोभनीय है। हमें अपने महापुरुषों के सिद्धांतों पर कभी कोई टिप्पणी नहीं करनी चाहिए। हमें सदैव महापुरुषों के जीवन से शिक्षा लेनी चाहिए और उनके द्वारा दी गई शिक्षा से अपने जीवन को और उच्च पदों पर बैठे राजनेताओं को जनता को सुविधा प्रदान करनी चाहिए

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः

डॉ. शिव प्रसाद शर्मा

भारतीय-संस्कृतौ नारीणां यादृशी प्रतिष्ठा गौरवं च दृश्यते, तादृशम् अन्यत्र दुर्लभम्। आदौ नार्यः सम्मानार्हाः। सा हि लोकस्य जननी, पालिका, संहारकर्त्री, प्रेरणादायिका वल्लभारूपेण च वर्तते। समाजे नारीणां जननी-पत्नी-पुत्री, भागिन्यादिरूपं प्राप्यते। एभिः रूपैः सा समाजस्य स्वरूपनिर्माणं संरक्षणं सम्पोषणञ्च करोति। तस्याः लोके प्रतिष्ठा आदिशक्तिरूपेण आख्यायते।

सृष्टेरादिकालादेव नारी परिवार व्यवस्थाया मूलं विद्यते। सा पुरुषस्य सहधर्मचारिणी भवति। विवाहावसरे पुरुषस्तां धर्मादिकार्ये सहभागित्वेनाभिमन्त्रयति। सर्वाण्यपि धार्मिककृत्यानि सपत्नीकेन पुरुणेण क्रियन्ते। उच्चयते- 'बिना पत्नी कथं धर्मः' इति। अतो भारतीय समाजे नारी पूजार्हा। अद्यापि सर्वकार्येयु प्रथमं गौरीतिरूपा देवी पूज्यत एव। केयं गौरी? इयं हि आदि पुरुषस्य भगवान् शिवस्य अर्धाङ्गिनी, लोकजननी, दुष्टजनसंहारकत्री, सर्वमाङ्गल्यप्रदा च।

नारी एव लोकस्य चराचरजगतो जननी। सा न केवलं चिरकालं दुखं सोढ्यन्ती सुतं जनयति, अपि तु तस्य महता स्नेहेन वात्सल्येन च लालनं पालनं संवर्द्धनमपि करोति। ममताकारणात् स माता। स्वसुतं प्रति कापि माता कुमाता न भवति। उक्तञ्च- **'कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति।'**

जननी एव सुकुमारमतिषु बालेषु उत्तमान् गुणान् संस्थापयति। जनन्या प्राप्तोत्तम- संस्काराः कुमाराः बालका एव स्वजीवने श्रेष्ठा महापुरुषाः समभूवन्। ध्रुवः, भरतः, रामचद्रः, महात्मागान्धिः, शंकराचार्यप्रभृतयो मातृशिक्षया एव लोके वंदनीयाः सन्ति। शिवाजी अपि मातुः प्रयत्नेन एव छत्रपति संज्ञामलभूत। अत एव भारतीय समाजे मातृत्वं पूज्यतमं विद्यते। उक्तञ्च 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।' तथा 'प्रीणाति मातरं येन पृथिवी तेन पूजिता।' एतत्सर्वं मनुना श्लोकेनैकेन प्रतिपादितम्-

प्रजनार्थं महाभागाः पूजर्हा गृहदीप्तयः।
स्त्रियश्श्रियश्च गेहेषु न सिशेषोऽस्ति कश्चन।।

नार्याः द्वितीयं श्लाघ्यं रूपं पत्नीरूपम्। पत्नीरूपेण स पुरुषस्य शक्तिरूपा। सा पुरुषं कर्मणि नियोजयति, तस्य खेदञ्चापनयति। सा दुःखकालेऽपि स्वपतिं न जहाति, अपि तु दुःखसागरात् तं विपन्नं निस्तारयति एव। स्त्रियः प्रभावेणैव कालीदासः, तुलसीदासादयो महाकवयो बभूवुः। एवमेव, भागिनीरूपा, पुत्रीरूपा नारी अपि भारतीय समाजे पूज्या एव। भगिनीरूपेण नारी सदा स्वभ्रातुर्हितं कामयते। अधुनापि भारते श्रावणमासे प्रतिवर्ष रक्षाबंधनमायाति, कार्तिकमासे च यमद्वितीया भ्रातृद्वितीया वा आयाति। अस्मिन् दिवसे नार्यः स्वभ्रातुः दीर्घायुत्वं सबलत्वं सर्वत्र विजयाय कामयन्ते। एवं नार्या रूपं परिवारस्य समाजस्य राष्ट्रस्य किं वा सकलस्य विश्वस्य अभ्युत्थानाय महार्हणीयम् भवति। उक्तञ्च केनचिद् विदुषा-

कार्येषु मंत्री कारणेषु दासी भोज्येषु माता शयनेषु रम्भा।
धर्मानुकूला क्षमया धरित्री भार्या च षाड्गुण्यवतीह दुर्लभा।।

किंतु भारतवर्षस्य सहस्त्राधिकवर्ष पर्यन्तात् पारतंत्र्यात् इयं सम्मानभावना तिरोभूतां। समाजे नारी भोग्या दासीरूपा निष्ठति। अधुना नारीणां वा स्थितिः सा अतीव शोचनीया विद्यते। सम्प्रति बहवः स्त्रियः पुरुषैः नाना प्रकारेण पीड्यन्ते उपेक्ष्यन्ते च। यौतुककारणात् मृत्युमालिङ्गन्ति अग्निना अन्यै साधनौः वा, किंतु सर्वभेदो गर्हणीयः। यत्र-यत्र नारीणाम सम्मानं भवति, तत्र-तत्र युद्धं विनाश्च निश्चितमेव। महाभारतं रामायणञ्चास्योदाहरणम्। महाभारते कौरवाणामन्येषा भूपतीनाश्च नाशो द्रौपद्याः।

इदमस्माकं महत्सौभाग्यं यत् स्वतंत्रतां प्राप्य पुनर्भारतीयाः भारतसर्वकाराश्च नारीणमभ्युत्थानकार्ये सततं प्रयत्नशीला दृश्यन्ते। अधुना नारी स्वेच्छया शिक्षां व्यवसायं स्वजीवन सहयोगिनं पतिं च वरयितुं समर्था। सा पुरुषस्य न दासी, अपि तु सहधर्मिणीरूपा सर्वेषु क्षेत्रेषु तिष्ठति। अयम् राष्ट्रगौरवस्याभ्युत्थानस्य शुभसंकेतो निद्यते। अतः साधुरेव प्रोक्तम्-

'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः'

OO

योग किया नहीं जाता, जीया जाता है

आचार्य धर्मवीर

वर्तमान समय में योग एक बहुत प्रचलित शब्द है, परन्तु अपने अर्थ से बहुत दूर चला गया है। योग के सहयोगी शब्दों के रूप में समय-समय पर कुछ शब्दों का प्रयोग होता रहता है- योगासन, योग-क्रिया, योग-मुद्रा आदि। इसी प्रकार कुछ अलग-अलग क्रियाएं, जिनसे प्रयोजन की सिद्धि हो सकती है, उनका भी योग नाम दिया गया है- राजयोग, मंत्रयोग, हठयोग आदि। इनसे परमात्मा की प्राप्ति होना अलग-अलग ग्रन्थों में बताया गया है। मूलत: योग शब्द का अर्थ जोड़ना है। जोड़ना गणित में भी होता है, अत: संख्याओं के जोड़ने को योग कहते हैं। जिस कार्य से प्रयोजन की सिद्धि न हो, उसे वह नाम देना निरर्थक है। योग में किसी से जुड़ने का भाव अवश्य है।

हम समझते हैं, योग प्रात:काल-सायंकाल करने की चीज है। योग चाहे आसन के रूप में किये जायें, चाहे साधना के रूप में। आसन के रूप में योगासन स्वास्थ्य के लिए किये जाते हैं, किन्तु पूरे दिन स्वास्थ्य-विरोधी आचरण करते हुए योगासन करके कोई स्वस्थ नहीं हो सकता, क्योंकि प्रात:काल-सायंकाल योगासन करके शरीर को सक्रिय तो कर लिया, परन्तु भोजन और विश्राम के द्वारा ऊर्जा का संग्रह किया जाता है। भोजन, विश्राम यदि ठीक नहीं तो आसन व्यर्थ हो जाते हैं।

व्यायाम, आसन, प्राणायाम आदि से तो तंत्र को दृढ़ता और सक्रियता प्रदान की जाती है। उसी प्रकार योग-साधना का प्रयोजन परमेश्वर से मिलना है, उससे जुड़ना या उस तक पहुंचना है। यदि योग परमेश्वर तक पहुंचने के उपाय का नाम है, तो विचार करने की बात यह है कि उस परमेश्वर की प्राप्ति का यत्न तो प्रात:काल सायंकाल घंटा-दो-घंटा किया जाये, उससे दूर होने के काम सारे दिन किये जायें तो कल्पना कर सकते हैं कि हम कब तक परमेश्वर को मिल सकेंगे? यह तो ऐसा हुआ जैसे प्रात:काल-सायंकाल अपने गंतव्य की ओर दौड़ लगाना और दिनभर उसके विपरीत दिशा में दौड़ना। ऐसा व्यक्ति जन्म-जन्मान्तर तक भी अपने लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सकता। इसी प्रकार पूरे जीवन प्रात:सायं संध्या, योग करते रहने वाला कभी भी परमेश्वर तक नहीं पहुंच सकता, क्योंकि वह उद्देश्य की ओर थोड़े समय चलता है, उद्देश्य के विपरीत अधिक समय चलता है। ऐसा व्यक्ति लक्ष्य से दूर तो हो सकता है, परन्तु लक्ष्य तक कभी भी नहीं पहुंच सकता।

योग परमेश्वर तक पहुंचने का उपाय है, तो यह कार्य कुछ समय का नहीं हो सकता। जैसे कोई व्यक्ति यात्रा पर निकलता है, तो सभी कार्य करते हुए भी उसकी यात्रा, उसी दिशा में निरन्तर आगे-आगे बढ़ती रहती है। मार्ग में वह सोता है, खाता है, बात करता है, किन्तु उसकी न तो यात्रा की दिशा बदलती है, न यात्रा पर विराम लगता है और वह देरी से या जल्दी गंतव्य तक पहुंच ही जाता है। इसी कारण वेदांत दर्शन में साधना कब तक करनी चाहिए- इस प्रश्न के उत्तर में कहा गया है- आ प्रायणात्तत्रापि दृष्टम्। लक्ष्य की प्राप्ति तक साधना करने का विधान किया गया है, अत: योग केवल प्रात:काल-सायंकाल की जाने वाली क्रिया नहीं है। यह जीवनरूपी यात्रा है, जिसका प्रयोजन परमेश्वर तक पहुंचना या उसे प्राप्त करना है। यह यात्रा तब तक समाप्त या पूर्ण नहीं हो सकती, जब तक लक्ष्य की प्राप्ति न हो जाये। यह जीवन-यात्रा कैसे सम्भव है? इसको बताने वाले अनेक शास्त्र हैं, परन्तु योगदर्शन इसका सबसे अधिक व्यवस्थित, उपयोगी एवं सरल शास्त्र है। इस सारे योगदर्शन को संक्षिप्त किया जाये, तो तीन सूत्रों में बांधा जा सकता है, शेष शास्त्र तो इन सूत्रों का व्याख्यान है। प्रथम योग कैसे होता है, यह सूत्र में कहा गया है- योगश्चित्तवृत्तिनिरोध:।

चित्त की वृत्तियों के निरोध-अवरोध करने का नाम योग है। जब चित्त की वृत्तियां अर्थात् उनका बाह्य व्यापार रुक जाता है, तो प्रयोजन की प्राप्ति हो जाती है। अगले सूत्र में बतलाया गया है, वह प्रयोजन क्या है, जो चित्त के बाह्य व्यापार को रोकने से सिद्ध होता है? तो पतञ्जलि मुनि कहते हैं- तदा द्रष्टु: स्वरूपे अवस्थानम्। चित्त का कार्य ही आत्मा को संसार से जोड़ना है, जब उसे संसार से जोड़ने के काम से रोक दिया जाता है तो वह बाहर के व्यापार को छोड़ कर भीतर के व्यापार में लग जाता है।

उसके भीतर का व्यापार आत्मदर्शन कहलाता है, जब वह स्वयं में स्थित होता है तो अपने में स्थित परमात्मा का भी उसे सहज साक्षात्कार होता है, अत: योग परमात्मा के साक्षात्कार करने का नाम है। जब हमारा चित्त हमारी आत्मा में नहीं होता तो निश्चित रूप से विपरीत दिशा में लगा होता है। क्योंकि मन एक क्षण के लिए भी निष्क्रिय नहीं रहता, अत: मनुष्य के सोते, जागते, वह कार्य में लगा रहता है, तब यदि वह अन्तर्मुखी नहीं होगा तो निश्चित रूप से बहिर्मुखी होगा। योग को जीवन का अंग बनाएं। ○○

अन्तर्मन

अन्तर्मन के अन्तर्तम् को हे अन्तर्यामी दूर करो
अनंत आशीष की अमृत बरसा, नित्य और भरपूर करो।

अखिल विश्व प्रकाश तुम्हारा, कण-कण को प्रकाशमान करो
अमर चेतना के अपार पुंज, श्वासों को प्राणवान करो।

स्नेह सुधा बरसाकर, प्रभोवर अन्तस वेदना दूर करो
अन्तर्मन के अन्तर्तम् को, हे अन्तर्यामी दूर करो।

चल-अचल जल-थल, अंतरिक्ष को, सदा गतिमान करो
हर हृदय विश्वास हिलोरे लें, हृदय सागर समान करो।

जगमग-जगमग सम्पूर्ण जगत हो, ऐसी कृपा जरूर करो
अन्तर्मन के अन्तर्तम् को, हे अन्तर्यामी दूर करो।

सौम्य सुधा ऐसी बरसाएं चहुं ओर तन मन भीगा हो
सम्पूर्ण धरा, स्नेह काव्य सुधा से, हर छोर कण-कण भीगा हो।

अपनी आलौकिक दिव्य प्रभा से, सभी में प्रेम प्रचूर भरो
अन्तर्मन के अन्तर्तम् को, हे अन्तर्यामी दूर करो।

➲ विजय गुप्त

बीहड़ वन में विचर रहा...

सुनी जमाने ने ना उसकी क्या थी दर्द कहानी
जानबूझकर हम लोगों ने एक न उसकी मानी
कांच पीसकार दूध में डाला, ऊपर जहर मिला डाला।।

फूट-फूटकर हर एक नस से शीशा बाहर आया
खिला हुआ था फिर भी चेहरा जरा नहीं मुरझाया
इच्छा पूर्ण हो तेरी भगवन्, तू ही मेरा प्रीतम प्यारा।।

कहा ऋषि से जब भक्तों ने, कोई पीछे याद बनायें
भक्तों की सुनकर के वाणी ऋषिराज मुस्काये
वही चलाना चाहते हो तुम जिससे चाहते छुटकारा।।

वैदिक रीति से दाह करना, देह मेरी जल जाये।
मैं चाहता हूं राख भी मेरी काम देश के आये।
राख उठा खेतों में डालो 'प्रेमी' जाने जग सारा।।

➲ रचना : शोभाराम 'प्रेमी'

स्वामी दयानन्द का पता

दहकती आग के, मैं लाल अंगारों से पूछूंगा।
हटा के मौजों को, तूफान की धारों से पूछूंगा।
मेरे गम-ख्वार को, गम के बीमारों से पूछूंगा।
पहाड़ों से, चट्टानों से, मैं दीवारों से पूछूंगा।
दयानन्द का पता, मैं चांद और सितारों से पूछूंगा॥

यही अरमान है दिल में, मैं टंकारे में जाऊंगा।
ऋषि पर जो बनाये गीत, वे रो-रो के गाऊंगा।
अगर सूरत दयानन्द की, वहां नहीं देख पाऊंगा।
कसम ईश्वर की खा कर, मैं खून अपना बहाऊंगा।
तड़प कर शिव के मंदिरों की, मैं मीनारों से पूछूंगा॥

गुरुवर! हे गुरुवर! मैं वहां नारे लगाऊंगा।
मैं गुरुभक्ति की यह आवाज, दुनिया को सुनाऊंगा।
गुरु को गर न देखूंगा, वहीं धूनी रमाऊंगा।
कसम ईश्वर की बिन दीदार, मैं वापस न आऊंगा।
बिगड़ कर जोश में, अजमेर के यारों से पूछूंगा॥

बिछाये किस ने थे कांटे मेरे गुरुवर की राहों में।
पिलाया जहर का प्याला, व्यहार था किस की बाहों में।
न झिझकूंगा मैं डट जाऊंगा, तलवारों की छाओं में।
सर अपना हाथ में लेकर, फिरूंगा गांवों-गावों में।
सिला उस खून का, दुनिया के गद्दारों से पूछूंगा॥
स्वामी दयानन्द का पता... स्वामी दयानन्द का पता॥

➲ विनोद प्रकाश गुप्त

परमात्मा सर्वोत्तम प्रबंधक है

कन्हैया लाल आर्य

आधुनिक युग प्रबंधकों का युग है। एक से बढ़कर एक प्रबंधक की चर्चा आये दिन होती रहती है, परंतु मैं संसार के आधुनिक प्रबंधकों को यह बताना चाहूंगा कि सबसे बड़ा प्रबंधक परमपिता परमात्मा है। उसने प्रकृति की प्रत्येक कृति का जिस तरह प्रबंधन किया है वह तो हमारी समझ की सीमा से भी परे है।

आइये, हम सबसे पहले अपने शरीर की रचना पर विचार करें। परमात्मा ने शरीर के एक-एक अंग की जिस प्रकार रचना की है उसे देखकर मानव बुद्धि चकरा जाती है। चाहे नेत्र रचना हो, हृदय की धड़कन हो, बिना कब्जे के एक-एक हड्डी को दूसरे के साथ किस प्रकार जोड़ा है। एक व्यक्ति के गले की आवाज दूसरे से नहीं मिलती, एक व्यक्ति की उंगलियों के चिह्न दूसरे व्यक्ति की उंगलियों के चिह्नों से नहीं मिलते, एक व्यक्ति का स्वभाव दूसरे व्यक्ति से नहीं मिलता।

किस-किस बात की चर्चा की जाए, हर बात उसकी निराली है। एक जीवात्मा के गुण-कर्म-स्वभाव दूसरे जीवात्मा से नहीं मिलते। इससे बड़ी उसकी विचित्रता और प्रबंध व्यवस्था क्या हो सकती है? विशेष बात यह है कि बड़े से बड़े शरीर-वैज्ञानिक उसकी रचना और व्यवस्था को पूरी तरह समझ भी नहीं पाये हैं। अब कुछ फलों की चर्चा करते हैं। केला एक ऐसा फल है जिसको ढंकने के लिए प्रभु ने एक खोल उसको दिया है। प्रभु जानता है कि मेरे पुत्र एवं पुत्री को अब हलवा खाने की आवश्यकता हो तो वह हलवा बाहर की धूल-मिट्टी से बच कर रहे, इसीलिए उस पर एक खोल बना दिया। संतरे को लें, संतरे के बाहर एक छिलका लगा दिया। इतना ही नहीं छिलके के अंदर संतरे के रस के लिए कई प्रकार के छोटे-बड़े डिब्बे बना दिये और उसमें उस संतरे के रस को रख दिया। इतना ही नहीं परमात्मा ने विचारा कि मेरा भक्त संतरे को पुनः खायेगा तो बोने के लिए उसका बीज उसके अंदर रख दिया। अनार को लीजिए, अनार के बाहर खोल बनाया। अंदर कई प्रकार के छोटे-छोटे विभाग बनाये। विभागों में फिर कई प्रकार के उप विभाग बना दिये। फिर जाकर कहीं दाने डाले और दानों में भी प्रत्येक दाने में एक छोटी से गुठली उसको सुरक्षित रखने के लिए डाल दी। हे प्रभु! तेरी रचना और उसका प्रबंधन देखकर मानव बुद्धि चकरा जाती है।

मुझे एक बार किसी कार्यक्रम में हरिद्वार जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। किसी परिवार में जाकर ठहरा। जब प्रातः काल हम नाश्ते पर बैठे थे तो गृहस्थ परिवार मुझसे पूछने लगा पंडित जी आप पपीता खाओगे? हमारे यहां पपीते का एक पेड़ है, वहां दो पपीते प्रतिदिन पक जाते हैं। मुझे प्यार से वे 'पंडितजी' इसलिए पुकारने लगे थे कि उन्हें पता लग गया था कि मैं यज्ञ आदि कर्मकांड के कार्य बहुत अच्छे ढंग से करा लेता हूं। मैं कुछ विद्वानों के संपर्क और सत्संग में आकर कुछ कर्मकांड को क्रियाएं सीख गया हूं। अतः लोग मुझे जब पंडित जी कहने लगे तो मेरा वह मित्र जिनके यहां मैं ठहरा हुआ था वह भी पंडित जी कहने लगा। मैंने उनसे प्रश्न किया कि एक मौसम में कितने पपीते लग जाते हैं? तो उन्होंने बताया कि लगभग 40 से 50 पपीते एक मौसम में लग जाते हैं। मैंने उनसे कहा कि केवल एक या दो पपीते ही, क्यों पकते है? एक साथ क्यों नहीं पकते? उन्होंने जो उत्तर दिया वह मेरी शंका का समाधान था। वह पुनः कहने लगे, पंडित जी परमपिता परमात्मा बड़ा ही दयालु है।

वह सोचता है यदि मैं सारे के सारे पपीते एक बार पका दूं तो मेरे पुत्र और पुत्रियां उन सभी को एक साथ नहीं खा पाएंगे। या तो उन्हें बेच डालेंगे या वे गल जाएंगे। इसीलिए परमात्मा ने ऐसी व्यवस्था कर दी है कि मेरी संतान को यह अमृत फल मैं प्रतिदिन दूं। इसीलिए प्रतिदिन एक या दो पपीतों को ही पकाता है। उसकी व्यवस्था में कहीं भी दोष नहीं, वह एक उत्तम प्रबंधक है। उसकी प्रत्येक प्रबंध व्यवस्था बुद्धिपूर्वक है और प्राणियों के हित के लिए है। ऐसे उत्तम प्रबंधक को हम शत-शत नमन करते हैं।

इसी प्रकार गेहूं, चावल, जौ, चना आदि को पकने की व्यवस्था उससे अलग कर दी। यदि पपीते के पकने के साथ-साथ प्रतिदिन एक या तो दाने पकाता जो पहले पक जाता वह अंतिम दाने पकने की प्रतिक्षा करता तो संभवतः सबसे पहले पकने वाला दाना या तो गिरकर धूल में मिल जाता या गल जाता। अंतिम पकने वाला दाना तो कच्चा रह जाता। इसी प्रकार कुछ कच्चे कुछ पक्के दाने मिलते जिससे हम उनका उपयोग ठीक ढंग से न कर सकते। सबसे बड़ा प्रबंधक परम पिता परमात्मा है। ○○

वेदांत दर्शन में ज्ञान मीमांसा

डॉ. हरिप्रसाद दुबे

ऋग्वेद के एक प्रसिद्ध सूक्त से भारतीय चिंतन का प्रारंभ माना जाता है। उपनिषद् गीता और वेदांत सूत्र में इसकी परिणति हुई है। उपनिषद् वैदिक साहित्य का अंतिम भाग है, अत: उन्हें वेदांत नाम प्रदान किया गया। वेदांत सर्वोत्कृष्ट भारतीय प्रतिभा के द्वारा किया गया और औपनिषदसत्य का व्याख्यान है। वेदांत दर्शन के मूलाधार उपनिषद् ही हैं। व्यावहारिक प्रमाणों के लिए अगम्य पारमार्थिक सत्य को उपनिषदों को प्रभावपूर्ण अभिव्यक्ति मिली है।

श्रुतियों में प्रभु आज्ञा की भांति सत्य निरूपित है। भारतीय दर्शन में वेदांतीय तर्क विद्या विलक्षण है। वेदांत में अपने लक्ष्य को व्यावहारिक कहा गया है। वेदांत का उद्घोष है कि मानव अपने इसी जीवन में परम पुरुषार्थ-मोक्ष को प्राप्त कर सकता है। इसका ऋजु मार्ग ज्ञान है। वेदांत विषयक संस्कृत वाङ्गमयवेदांतीयतत्व मीमांसा है। इसका परम उद्देश्य यही है कि न कोई गुरु है और न कोई शिष्य, न कोई साधक है और न कोई सिद्ध, न बंधन है और न मुक्ति।

यह परम मुक्ति त्याग और वैराग्य से प्राप्त होती है। जीवन को क्लेश देने वाले समस्त असत संबंधों का परित्याग श्रेयस्कर रहता है। आत्मा सत्यस्वरूप, नित्य, मुक्त, शुद्ध, असीम, अनंत और अपरिमेय है, यह असीम आनंद शक्ति और मुक्ति आदि की साक्षात् मूर्ति है। अंतत:ज्ञान से ही मुक्ति है। ज्ञानादेव-तुकैवल्यम्! मात्र सत्य ही हमें मुक्त करता है। सत्य का ज्ञान मार्ग है और अर्थ में जीवन का परम मूल्य है। वेदांत तत्वज्ञान और कर्म के बीच किसी विभेद की स्थिति को स्वीकार नहीं करता है। ब्रह्मविद ब्रह्मौवभवति अर्थात् ब्रह्मज्ञान और ब्रह्म प्राप्ति एकार्थक शब्द है। बादरायण व्यास ने वेदांत दर्शन का आविर्भाव किया। उन्होंने वेदांत (ब्रह्म) सूत्र की रचना की। वेदांत में ज्ञान के दो स्वरूप वर्णित हैं- परा विद्या और अपरा विद्या।

प्रथम का संबंध परम तथा व्यक्तित्व रहित से है, जो रूप-गुण रहित है। द्वितीय का संबंध उस वैयक्तिक ब्रह्म से है, जो ईश्वर अर्थात् इस संसार का सृष्टा है। इनमें निम्नतर रूप उच्चतर रूप का एक माया रूप मात्र है, जो अज्ञान से उत्पन्न होता है। वेदांत विवर्तवाद के अनुसार यह जगत ब्रह्म रचित है और उसी में लीन हो जाता है। ब्रह्म सत्ता है, शेष जगत का प्रपञ्चमिथ्या है। मनुष्य भ्रम के कारण सभी को सत्य मानकर अंधेरे में पड़ी रस्सी को सर्प समझ लेता है। जगत सृष्टि में माया का ज्ञान आवश्यक है।

माया ब्रह्म शक्ति के बिना ब्रह्म सृष्टि नहीं कर पाते। शंकर इसी माया को अविद्या नाम देते हैं। ब्रह्म ज्ञानी को माया का ज्ञान नहीं होता। आवरण और विक्षेप नामक माया की दो शक्तियां हैं। आवरण से माया ब्रह्म के वास्तविक रूप को ढकती है। विक्षेप द्वारा उसमें आकाश, पृथ्वी आदि का आरोप करती है। माया के रूप को मानव सत्य मानता है। माया से आवृत्त होने पर ब्रह्म ईश्वर कहा जाता है जो जगत की सृष्टि, स्थिति और प्रलय का कारण है। वेदांत दर्शन ने प्रातिभासिक, व्यावहारिक और पारमार्थिक तीन प्रकार की सत्ता मानी है। प्रातिभासिक सत्ता क्षणिक है और थोड़ी देर के लिए रहती है। जगत के सब व्यवहार के लिए दिखाई देने वाले पदार्थों में व्यावहारिक सत्ता होती है।

यह क्षणिक नहीं है। संसार के पदार्थों में अस्ति, भाति, प्रिय, रूप और नाम ये पांच धर्म होते हैं। इनमें के प्रथम तीन ब्रह्म धर्म हैं, शेष दो संसार के धर्म हैं। जगत की प्रत्येक वस्तु का कोई न कोई नाम एवं रूप अवश्य होता है। व्यवहार काल में वही सत्य लगता है। पारमार्थिक सत्ता सत्य है क्योंकि यह संसार सबको प्रतीत होता है किंतु किसी ज्ञानी की दृष्टि से देखने पर संसार असत्य लगने लगता है। तत्वमसि वेदांत दर्शन का मूल सिद्धांत है। वेदांत दर्शन की आस्था है कि चैतन्य का बिंब भिन्न-भिन्न स्थानों पर पड़ने से वह भिन्न-भिन्न नाम धारण कर लेता है। चैतन्य का प्रतिबिम्ब जब अंत:करण पर पड़ता है तो वह जीव चैतन्य कहलाता है। अत: अंत:करण से अविच्छिन्न चैतन्य ही जीव है और इसी जीव और ब्रह्म में अभेद है।

यही वेदांत का मूल मंत्र है। श्रवण मनन से जब जीव की विद्या हट जाती है, तब उसे ब्रह्म का ज्ञान हो जाता है और वह अहं ब्रह्मास्मिकी अनुभूति करने लगता है। जीवन और ईश्वर के विषय में वेदांत दर्शन में पृथक अवधारणाएं हैं। ब्रह्म का जगत रूप में दिखाई पड़ना उसके माया रूप का परिणाम है। शंकर ने ब्रह्म के निर्गुण, सगुण दो रूप माने हैं। माया विशिष्ट ब्रह्म सगुण है और यही ईश्वर है। निर्गुण ब्रह्म माया के संबंध से रहित, सर्वश्रेष्ठ, अखण्ड, व्यापक और सच्चिदानन्द है।

OO

101 कुंडीय यज्ञ कराते डॉ. आचार्य जयेंद्र कुमार जी साथ में वेदपाठी उमाशंकर आर्य।

गुरुकुल में विद्वान सम्मेलन को संबोधित करते डॉ. जयेन्द्र कुमार जी एवं मंचासीन उपस्थित महानुभाव।

गुरुकुल बलिदान सम्मेलन में भजन प्रस्तुत करते दिनेश पथिक जी।

कार्यक्रम में उपस्थित श्रोतागण।

गुरुकुल बलिदान सम्मेलन में प्रवचन करते डॉ. वेदपाल जी।

क्रांतिकारी भाषण प्रस्तुत करते हुए ब्र. ताराचन्द।

यज्ञ एवं कार्यक्रम का दृश्य

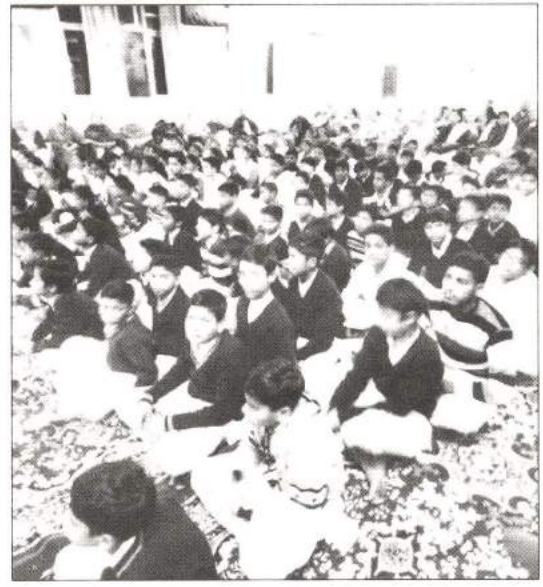

संस्कृति जीवन जीने की एक पद्धति का नाम है जिसका जन्म सबसे पहले इस पावन धरा पर हुआ और वह भारतीय संस्कृति कहलाई

आर्य भूपाल शर्मा
कौशांबी, गाजियाबाद

'सा प्रथमा संस्कृति विश्ववारा' वैदिक वांग्मय के सभी विद्वानों के मतानुसार विश्व के समस्त ग्रंथों में वेद ही प्राचीन ग्रंथ माने जाते हैं। सृष्टि के आरम्भ मे परमात्मा की कृपा से अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा ऋषियों के पवित्र हृदय में ऋग, यजु, साम और अथर्व वेद ज्ञानरूप में प्रकाशित हुए। यजुर्वेद के सातवें अध्याय के चौदवें मंत्र में 'सा प्रथमा संस्कृति विश्ववारा' का उल्लेख मिलता है। व्याकरण की दृष्टि से सा स्त्री लिंग एक वचन में प्रयुक्त हुआ है। अर्थात वह संस्कृति अब आगे बढ़ने से पूर्व हम संस्कृति के अर्थ पर प्रकाश डालते हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि भारतीय संस्कृति ने ही पूरे विश्व को आभास कराया कि अपने जीवन को किस प्रकार वे सशक्त, उत्कृष्ट, सभय, सयमीं एवं सुखमय बनाया जा सकता है। और उसने विश्व मानवता का मार्गदर्शन करना तभी से शुरू कर दिया था जबसे यहां सृष्टि का प्रथम मानव ने जन्म लिया।

सारे शास्त्रीय प्रमाण यही सिद्ध करते हैं कि आदि सृष्टि भारत के उत्तराखंड अर्थात आर्यावर्त में हुई। मानवीय मूल्यों की प्रतिस्थापना इसका प्रथम एवं प्रमुख लक्ष्य था तद् परिणाम स्वरूप मानव संस्कृति कहा गया। आगे चलकर मानव में देवतव के उदय होने से यह देव संस्कृति के रूप मे विकसित हुई जिसकी प्रेरणा इसे ऋषियों से प्राप्त हुई। इस संस्कृति का केंद्रीय तत्व है अध्यात्म भरने की संवेदना तथा दर्शन तत्व की प्रधानता। सामूहिक जीवन में आत्मीयता, उदारता, सेवा, स्नेह, सहिष्णुता, परोपकार तथा सहकारिता का वातावरण कैसे तैयार होता है। पूरा संसार अपना ही एक परिवार है और निकल पड़ी यह भावना कि 'बसुधैव कुटुंबकम तथा कर्णवंते विश्व आर्यम्।' इसी संस्कृति ने अपनी क्षमता से विश्व में फैली दूसरी संस्कृतियों में आमूलचूल बदलाव लाकर बताया कि मानव के भीतर मानवता कैसे ठहर सकती है। तनाव से भरे विश्व को शांति का संदेश देने का सामर्थ्य केवल भारतीय संस्कृति में है जो सहिष्णु, उदार, मानवतावादी और पूर्णत: आध्यात्मवादी है। जीवन को सामंजसता के अनुसार जीना तथा दूसरों के लिए पथ प्रस्त करना संस्कृति का रास्ता कहलाता है। दूसरी ओर अच्छी चीजों का उपभोग ऊपरी तड़क-भड़क में केवल अपने तक सीमित रहना कल्चर की पंक्ति में आता है। कुछ लोग संस्कृति और सभ्यता को एक-दूसरे का प्रर्यायवाची मानते हैं जो बिल्कुल गलत है। इन दोनों शब्दों में जमीन-आसमान का अंतर है। भौतिकवाद में मानव नितांत भोगवादी बनकर विलासिता का वैभव शान की जीवन बिताता रहे किंतु मन मे बेचैनी और शांति से दूर रह कर अपने को सभ्य कहलाने में गौरव समझता है जबकी संस्कृति शूक्ति के अनुसार 'तेन तयकतेन भुंजिता' अर्थात् भोग भी करो तो भी त्याग के साथ। सामान्यतया संस्कृति कल्चर तथा सभ्यता सिविलाइजेशन के लिये प्रयोग में होता है। इन दोनों शब्दों में मौलिक अंतर है। जबकि भारतीय संस्कृति का मूल लक्ष्य है 'जियो और जीने दो।' सर्वे भवंतु सुखिन:, सर्वे संतु निरामया, सर्वे भद्राणि पश्यंतु, मा कश्चित दु:ख भागभवेत। कर्णवंते विश्व आर्यम तथा बसुधैव कुटुंबकम्।

उपरोक्त गुणों से भरपूर होने के फलस्वरूप भारतीय संस्कृति ने ही सबसे पहले विश्व के निवासियों को ज्ञान की वह ज्योति दिखाई जिसके प्रकाश में वे अपने जीवन के लक्ष्य को सहजता से प्राप्त कर सकने मे सक्षम हो सकते हैं और रास्ते भी वे जो वेदों में बताये गये हैं। पाखंडवाद से दूर महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा दिखाया रास्ता। अत: जीवन में सत्य मार्ग पर चलकर सुखमय जीवन बनाने के लिए आइये 'सा प्रथमा संस्कृति विश्ववारा' नामक पत्रिका का नियमित रूप से पठन-पाठन करें। अत: सा प्रथमा संस्कृति विश्ववारा नामक पत्रिका वह पत्रिका है जिसके पढ़ने से पाठकों को अपने जीवन को सर्वोत्कृष्ट बनाने के सरल से सरल रास्ते सुलभ होते है। यह है हमारी संस्कृति जो सबके कल्याण में अपना कल्याण समझती है। अत: भारतीय संस्कृति ही वह संस्कृति है जिसने सबसे पहले पूरी दुनिया को अपने प्रकाश से आलोकित कर सभी को अपने आगोश मे अंकित कर लिया और सभी के ऊपर मातृत्व आलोकित कर दिया, बिना किसी स्वार्थ के और बिना किसी भेदभाव के। ○○

नेताजी सुभाष चंद्र बोस

जन्म : 23 जनवरी
शत्-शत् नमन

नेताजी सुभाष चंद्र बोस का जन्म 23 जनवरी 1897 को उड़ीसा में कटक के एक संपन्न बंगाली परिवार में हुआ था। बोस के पिता का नाम जानकीनाथ बोस और मां का नाम प्रभावती था। जानकीनाथ बोस कटक शहर के मशहूर वक़ील थे। प्रभावती और जानकीनाथ बोस की कुल मिलाकर 14 संतानें थी, जिसमें 6 बेटियां और 8 बेटे थे। सुभाष चंद्र उनकी नौवीं संतान और पांचवें बेटे थे। अपने सभी भाइयों में से सुभाष को सबसे अधिक लगाव शरदचंद्र से था। नेताजी ने अपनी प्रारंभिक पढ़ाई कटक के रेवेंशॉव कॉलेजिएट स्कूल में हुई। तत्पश्चात् उनकी शिक्षा कलकत्ता के प्रेज़िडेंसी कॉलेज और स्कॉटिश चर्च कॉलेज से हुई, और बाद में भारतीय प्रशासनिक सेवा (इंडियन सिविल सर्विस) की तैयारी के लिए उनके माता-पिता ने बोस को इंग्लैंड के केंब्रिज विश्वविद्यालय भेज दिया। अंग्रेजी शासन काल में भारतीयों के लिए सिविल सर्विस में जाना बहुत कठिन था किंतु उन्होंने सिविल सर्विस की परीक्षा में चौथा स्थान प्राप्त किया। 1921 में भारत में बढ़ती राजनीतिक गतिविधियों का समाचार पाकर बोस ने अपनी उम्मीदवारी वापस ले ली और शीघ्र भारत लौट आए। सिविल सर्विस छोड़ने के बाद वे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के साथ जुड़ गए। सुभाष चंद्र बोस महात्मा गांधी के अहिंसा के विचारों से सहमत नहीं थे। वास्तव में महात्मा गांधी उदार दल का नेतृत्व करते थे, वहीं सुभाष चंद्र बोस जोशीले क्रांतिकारी दल के प्रिय थे।

स्वतंत्रता सेनानी लाला लाजपत राय

जन्म : 28 जनवरी
शत्-शत् नमन

लाला लाजपत राय भारत में ब्रिटिश शासन के खिलाफ लड़ने वाले मुख्य क्रांतिकारियों में से एक थे। वह पंजाब केसरी (पंजाब का शेर) के नाम से विख्यात थे और कांग्रेस के गरम दल के तीन प्रमुख नेताओं लाल-बाल-पाल (लाला लाजपत राय, बाल गंगाधर तिलक और बिपिन चन्द्र पाल) में से एक थे। उन्होंने पंजाब नैशनल बैंक (पीएनबी) और लक्ष्मी बीमा कम्पनी की स्थापना भी की। लाला लाजपत राय का जन्म 28 जनवरी 1865 को दुधिके गॉव में हुआ था जो वर्तमान में पंजाब के मोगा जिले में स्थित है। वह मुंशी राधा किशन आज़ाद और गुलाब देवी के ज्येष्ठ पुत्र थे। उनके पिता बनिया जाति के अग्रवाल थे। बचपन से ही उनकी माँ ने उनको उच्च नैतिक मूल्यों की शिक्षा दी थी। लाला लाजपत राय ने बहुत से क्रांतिकारियों को प्रभावित किया और उनमें एक थे शहीद भगत सिंह। सन् 1928 में साइमन कमीशन के विरुद्ध प्रदर्शन के दौरान हुए लाठी-चार्ज में बुरी तरह से घायल हो गये और 17 नवम्बर सन् 1928 को परलोक सिधार गए। उनकी मौत का बदला स. भगत सिंह व उनके साथियों द्वारा लिया गया।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी

स्मृति : 30 जनवरी
शत्-शत् नमन

महात्मा गांधी एक महान स्वतंत्रता सेनानी थे उन्होंने अपना पूरा जीवन भारत की आज़ादी के संघर्ष में बिताया। उनका जन्म एक हिन्दू परिवार में 2 अक्टूबर 1869 में गुजरात के पोरबंदर में हुआ था। उन्होंने अपना पूरा जीवन भारतीय लोगों के एक नेता के रूप में व्यतीत किया। उनके पूरे जीवन की कहानी हमारे लिए एक महान प्रेरणा है। वे बापू या राष्ट्रपिता कहलाते है क्योंकि उन्होंने अपना सारा जीवन हमें आज़ादी दिलाने के लिए ब्रिटिश शासन के खिलाफ लड़ाई लड़ने में बिता दिया। वे हमारे देश के असली पिता है क्योंकि ब्रिटिश शासन से हमें मुक्त कराने के लिए उन्होंने वास्तव में अपनी सारी शक्तियों का इस्तेमाल किया। वे 1947 में भारत की आज़ादी के बाद अपने जीवन को जारी नहीं रख सके क्योंकि 30 जनवरी 1948 को एक कार्यकर्ता नाथूराम गोडसे द्वारा उनकी हत्या कर दी गई। वह एक महान व्यक्तित्व थे उन्होंने मृत्यु तक अपना सारा जीवन अपनी मातृभूमि के लिए गुजार दिया। उन्होंने ब्रिटिश शासन से आजादी से हमारे जीवन को सच्चे प्रकाश से प्रबुद्ध कर दिया।

The Myth of the Aryan Invasion of India

Article By David Frawley

One of the main ideas used to interpret and generally devalue the ancient history of India is the theory of the Aryan invasion. According to this account, India was invaded and conquered by nomadic light-skinned Indo-European tribes from Central Asia around 1500-100BC, who overthrew an earlier and more advanced dark-skinned Dravidian civilization from which they took most of what later became Hindu culture. This is so-called pre-Aryan civilization is said to be evidenced by the large urban ruins of what has been called the "Indus Valley Culture"(as most of its initial sites were on the Indus river). The war between the powers of light and darkness, a prevalent idea in the ancient Aryan Vedic scriptures, was thus interpreted to refer to this war between light and dark-skinned peoples. The Aryan invasion thus turned the Vedas, the original scriptures if the ancient India and the Indo-Aryans, "into little more than primitive poems of uncivilized plunderers.

The idea-totally foreign to the history of India, whether north or south has become almost an unquestioned truth in the interpretation of ancient history. Today, after nearly all the reasons for its supposed validity has been refuted, even major Western scholars are at last beginning to call it into question. In this article we will summarize the main points that have arisen. This is a complex subject that I have dealt with in depth in my books Gods, Sages and Kings: Vedic Light on Ancient Civilization, for those interested in a further examination of the subject. The Indus Valley culture was pronounced pre-Aryan for several reasons that were largely part of the cultural milieu of nineteenth century European thinking. As scholars following Max Muller had decided that the Aryans Came into Indian around 1500 BC, since the Indus Valley culture was earlier than this, they concluded that it had to be pre-Aryan. Yet the rationale behind the last date for the Vedic culture given by Muller, like many of the Christian scholars of his era, believed in Biblical chronology. This placed the beginning of the world at 400BC and the flood around 2500BC. Assuming those two dates, it became difficult to get the Aryans in India before1500BC.

Muller therefore assumed that the five layers of the four Vedas and Upanishads were each composed in two hundred year periods before the Buddha at 500BC. However, there are more changes of languages in Vedic Sanskrit itself than there are in classical Sanskrit since Panini, also regarded as a figure of around 500BC, or a period of 2500 years. Hence it is clear that each of the periods could have existed for any number of centuries and that the two hundred year figure is totally arbitrary and is likely too short a figure.

It was assumed by these scholars-many of whom were also Christian missionaries unsympathetic to the Vedas that the Vedic culture was that of primitive nomads from Central Asia. Hence they could not have founded any urban culture like that of the Indus Valley. The only basis for this war a rather questionable interpretation of the Rig Veda that they made, ignoring the sophisticated nature of the culture of the culture presented within it. (Conti. to next education)

बचाइए! विवाह संस्कार की पवित्रता को

गंगाशरण आर्य 'साहित्य सुमन'
शाहबाद मोहम्मदपुर, नई दिल्ली

विवाह संस्कार की पवित्रता को बचाने के लिए खासकर हम सभी हिन्दुओं को अपनी मूल संस्कृति को ध्यान में रखकर एक बार तो महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा लिखित सोलह संस्कारों पर प्रकाश डालने वाली 'संस्कार विधि' और 'सत्यार्थ प्रकाश' के चतुर्थ समुल्लास में वैवाहिक प्रकरण को तो अवश्य की पढ़ लेना चाहिए ताकि भावी पीढ़ियां अपने मां-बाप की इज्जत तो तार-तार करने से बच सकें। विचारणीय बिन्दु इस प्रकार है-

सगोत्र विवाह : हिन्दुओं के रीति - रिवाज की संवैधानिक पुस्तक 'मनुस्मृति' में स्पष्ट लिखा है कि जो कन्या माता के कुल की छः पीढ़ियों में न हो, और पिता के गोत्र की न हो, उस कन्या से विवाह करना उचित है। इसका मुख्य प्रयोजन यह है कि जैसे पानी में पानी मिलने से विलक्षण गुण नहीं होता वैसे एक गोत्र पितृ कुल में विवाह होने में धातुओं के अदल-बदल नहीं होने से उन्नति नहीं होती।

सपीपस्थ विवाह होना : विवाह दूर देश में होने से हितकारी होता है इसी भावना से कन्या का नाम 'दुहिता' पड़ा है। मायका और ससुराल पास-पास होने से सुख-दुःख का भान और विरोध होना भी संभव है, दूरस्थ देशों में नहीं। दूरस्थों के विवाह में दूर-दूर प्रेम की डोरी लम्बी बढ़ जाती है निकटस्थ विवाह में नहीं।

प्रेम विवाह : लड़का-लड़की आपस में रजामंद हो तो विवाह अच्छा ही है लेकिन माता-पिता की जानकारी के बिना लड़का-लड़की का पारस्परिक मेल-जोल 'गर्ल फ्रैंड्स' और ब्वॉय फ्रैंड्स' के नाम पर जो आजकल चालू हो जाता है घर से बाहर एकांत सेवन करते-कराते जो विवाह के लिए तैयार होकर घरवालों की स्वीकृति न होने पर भी घर से भागकर विवाह करते हैं वह एकदम हिंदू रीति के विरुद्ध है, वैदिक मान्यता के विरुद्ध है। भारतीय संविधान का सहारा लेकर अपने आप को सुरक्षित कर लेते हैं लेकिन इसका दुष्परिणाम अपनी भावी पीढ़ियों में देखने को अवश्य मिलता है। बाद में पछतावा ही शेष रह जाता है।

लिव इन रिलेशनशिप : बिना माता-पिता की जानकारी के लड़का-लड़की का विवाह से पूर्व अपने-अपने निवास स्थान से दूर कहीं शहर में पढ़ाई या नौकरी के बहाने किराये पर घर लेकर रहने लग जाना ये हिंदू रीति के विरुद्ध है इस तरह व्यभिचार मे लिप्त होकर जीवन बर्बाद करना हिंदू धर्म में घोर पाप है। यहां भी अंग्रेजी संविधान का आश्रय लेकर स्वयं को औरों की नजरों में निष्पाप समझ बैठना मूर्खता ही है। इस प्रकार के संबंध विवाह में प्रायः बदलते नहीं, यदि बदल भी जाए तो सुखी गृहस्थ जीवन कभी भी होता नहीं। स्वार्थ और व्यभिचार के कारण प्रायः इस प्रकार के युवक-युवतियां कोर्ट में धक्के खाते खिरते हैं।

लव मैरिज को अरेंज मैरिज में परिवर्तन करना और प्री वैडिंग की तरफ जाना : लिव इन रिलेशन की तर्ज पर कुछ दिनों के लिए लड़का-लड़की अपनी सहमति में परिवारजनों को मजबूर करके विवाह से पूर्व ही कहीं दूर फोटोग्राफर के एक समूह के साथ देश के अलग-अलग सैर-सपाटों की जगह, बड़े-बड़े होटलों बिल्डिंगों, समुद्री बीच अन्य ऐसी जगहों पर जहां सामान्यतः पति-पत्नी शादी के बाद हनीमून मनाने जाते हैं वे पहुंच जाते हैं।

पिक्चरों में प्रेमी-प्रेमिकाओं को जिन मुद्राओं में दिखाया जाता है। उस प्रकार की वीडियो बनाकर शादी के दिन मुख्य द्वार पर फोटो और स्टेज पर विडियो चलाई जाती है ताकि विवाह संस्कार अर्थात् फेरों से पूर्व ही सभी उपस्थित जन उनको देखकर अपना-अपना आशीर्वाद भी दे सकें और भोजन खाकर लौट जाए और सभी जन ऐसा ही करते हैं।

आजकल कौन फेरों पर बैठना चाहता है। जिस समय फेरे पड़ते हैं, वर-वधू को समझाया जाता है, प्रतिज्ञाएं वर-वधू को कराई जाती है, उस समय आमंत्रित मेहमानों की साक्षी होना जरूरी है, इसी समय के लिए तो उन्हें आमंत्रित करते हैं ताकि फेरे होने पर उनका आशीर्वाद मिल सके।

इस प्रकार आजकल जो सम्पन्न परिवारों के फैशनेबल बच्चे अंग्रेजियत के शिकार होकर, यूरोपियन सभ्यता के चक्कर में आकर व्यभिचार प्रेमी हो गए हैं उन्हें विवाह संस्कार की पवित्रता की कभी भी सही जानकारी कैसे हो सकती है? कभी नहीं हो सकती, उनका गृहस्थ जीवन पूरी तरह सुखमय होगा कहा नहीं जा सकता। विवाह संस्कार की पवित्रता आवश्यक है।

आध्यात्मिक चिंतन : कर्मण्येवाधिकारस्ते

प्रो. चन्द्र प्रकाश आर्य

कुछ लोग ऐसा मानते हैं कि कर्म करने की आवश्यकता नहीं, भाग्य में लिखा होगा तो अपने आप मिल जाएगा। भगवान् सबको देते हैं। कहा भी गया है- अजगर करे न चाकरी पंछी करे न काम। दास मलूका कह गए सबके दाता राम। किंतु ऐसी बातें भाग्यवादी किया करते हैं

जीवन बड़ा मूल्यवान है। संसार में प्रत्येक प्राणी जीना चाहता है। महभारत में यक्ष-युधिष्ठिर संवाद में यक्ष ने युधिष्ठिर से पूछा कि संसार में सबसे बड़ा आश्चर्य क्या है? युधिष्ठिर ने उत्तर दिया कि प्रतिदिन प्राणी मरते हैं परंतु फिर भी बाकी जीना चाहते हैं। इससे बड़ा आश्चर्य क्या है?

शेषाः जीवितुमिच्छन्ति किमाश्चर्यमतःपरम्

कालिदास ने रघुवंशम् में लिखा है कि प्राणी यदि क्षण भर जीता है तो यह बड़े लाभ एवं सौभाग्य की बात है। इसलिए वेद कहता है कि हम सौ वर्ष जीएं, सौ वर्ष देखें, सौ वर्ष सुनें, सौ वर्ष तक अच्छी तरह बोलें। जीवेम शरदः शतम्...। वेद यह भी कहता है कि हम कर्म करते हुए सौ वर्ष जीने की इच्छा करें। कुर्वन्नेवेह कर्माणि। संसार में सब कुछ कर्म के अधीन है। मानव जीवन के चारों पुरुषार्थ धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति कर्म द्वारा ही संभव है। मनुष्य जीवन कर्म करने के लिए है। गीता कहती है कि कर्म किए बिना कोई क्षण भर भी नहीं रह सकता।

कुछ लोग ऐसा मानते हैं कि कर्म करने की आवश्यकता नहीं, भाग्य में लिखा होगा तो अपने आप मिल जाएगा। भगवान् सबको देते हैं। कहा भी गया है- अजगर करे न चाकरी पंछी करे न काम। दास मलूका कह गए सबके दाता राम। किंतु ऐसी बातें भाग्यवादी किया करते हैं। नीतिशास्त्र कहता है कि उद्योगी या कर्मशील पुरुष को लक्ष्मी व समृद्धि स्वयं प्राप्त हो जाती है। कायर पुरुष ही भाग्य की बात करते हैं। इसलिए भाग्य का भरोसा छोड़कर अपने सामर्थ्य अनुसार कर्म करना चाहिए। फिर भी यदि सफलता नहीं मिलती है तो मानना चाहिए मि उसमें कोई न कोई त्रुटि रह गई होगी। हितोपदेश में कहा है कि जैसे मिट्टी के ढेले से कुम्हार घड़ा, सुराही, दीया आदि जो कुछ बनाना चाहता है बना सकता है। इसी प्रकार मनुष्य अपने कर्म से अभीष्ट वस्तु को प्राप्त कर सकता है।

आज मनुष्य धरती, समुद्र तथा आकाश पर विजय प्राप्त करने में लगा है। धरती का उसने नक्शा ही बदल दिया है। समुद्र को चीर कर वहां के खजाने बाहर लाने में लगा है। आकाश की ओर उसका अभियान जारी है। यह सब मनुष्य के कर्म की कहानी है, उसके निरंतर उद्यम का परिणाम है। किंतु कर्म में लिप्त नहीं होना चाहिए। कर्म में लिप्त होना, उसके प्रति आसक्ति रखना, फल के बंधन में बंधना है। यही सब अनर्थों का मूल है। आसक्तियां लिप्तता के कारण मनुष्य जीवनपर्यंत संसार के बंधनों में बंधा रहता है। कर्म में लिप्त होने के कारण ही हम जीवन के हर क्षेत्र में आसक्तियां लिप्तता की डोर से बंधे रहते हैं। इसी कारण घर-परिवार में धर्म, समाज और राजनीति में बड़े-बड़े बखेड़े एवं उत्पात होते हैं। हम घर-परिवार में लिप्त हैं, आसक्त हैं, राजनेता राजनीति में लिप्त हैं। पद या कुर्सी से इतनी आसक्ति है कि उसे छोड़ना ही नहीं चाहते। सदा सत्ता में बने रहना चाहते हैं। चाहे इससे दूसरों का भला हो या न हो। हम फल को, सुख-सुविधा को, लाभ को, सत्ता को, शासन को स्वयं तक सीमित रखना चाहते हैं। दूसरों तक उसके लाभ को नहीं पहुंचने देते। यही उत्पात, विरोध में वैमनस्य का कारण है। इसलिए वेद कहता है- हे मनुष्य! कर्म में लिप्त मत हो। गीता कहती है कि कर्म करने में ही मनुष्य का अधिकार है, फल की प्राप्ति में नहीं।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषुकदाचन।

कर्म किए बिना संसार में जीवन यात्रा नहीं चल सकती। जनक आदि बड़े-बड़े राजा-महाराजा भी कर्म करते आए हैं। लोक संसार में कर्म का ही प्रसार दिखाई देता है। इसलिए मनुष्य को कर्म करना चाहिए। गीता कहती है कि सिद्धि, असिद्धि में सम रहकर, समान भाव से रहकर आसक्ति को त्यागकर कर्म करना चाहिए-

योगस्थः कुरु कर्माणिसंगंत्यक्त्वाधनञ्जय।

कर्म का अनुकूल फल मिलने पर मनुष्य प्रसन्न होता है और प्रतिकूल फल मिलने पर उद्विग्न होता है, हताश और निराश होता है। व्यक्ति और समाज की ओर नजर डालकर देखें तो हिंसाओं और हत्याओं के पीछे यही कारण दिखाई देता है। परंतु फल की इच्छा या आसक्ति को त्यागकर हम कर्म क्यों करें? संसार में मूर्ख व्यक्ति भी बिना प्रयोजन के कोई कार्य नहीं करता।

पुनः आसक्तिरहित होकर या संग त्यागकर अथवा लिप्त न होकर कर्म करने से मिलता क्या है? इसका उत्तर गीता देती है कि जो व्यक्ति आसक्ति को त्यागकर, अनासक्त होकर कर्म करता है वह परमात्मा को प्राप्त कर लेता है-

असक्तोह्याचरन्कर्मपरमाप्नोतिपुरुषः।

यह पाखंड और अंधविश्वास देश को फिर गुलाम बनाएगा

सुरेंद्र कुमार रैली
अध्यक्ष, पाखंड और अंधविश्वास उन्मूलन समिति, दिल्ली

यदि हम भारत के इतिहास को ध्यानपूर्वक देखें तो पता चलता है कि हिंदू धर्म में फैले पाखंड और अंधविश्वास ने इसे सबसे अधिक नुकसान पहुंचाया है। इतिहासकार लिखते हैं कि जब महमूद गजनी सोमनाथ के मंदिर को लूट रहा था, लोगों की सरेआम हत्या कर रहा था, उस मंदिर के चारों ओर हजारों लोग जमा थे जो ईश्वर से केवल प्रार्थना कर रहे थे कि भगवान अवतरित हो जाओ और इन आततायियों से हमें और अपने आपको (मूर्तियों में बैठे भगवान) को बचा लो। महमूद गजनी अपने इतिहासकार अलब्रूनी को स्वयं कहता है कि उसने इतने अंधविश्वासी और मूर्ख लोग संसार में कहीं नहीं देखे जो पत्थर की मूर्तियों पर अटूट विश्वास रखते थे कि वह एकदम जीवंत हो जाएगी और उनकी रक्षा करेगी। उसका कहना था कि यदि वहां खड़े और प्रार्थना करते लोग एक पत्थर उठाकर भी उसके मुट्ठीभर सैनिकों को मारते तो उनके पैर उखड़ जाते। लेकिन उनके अंधविश्वास ने उन्हें ऐसा नहीं करने दिया।

महर्षि स्वामी दयानन्द जी ने इस बात को समझा कि भारत की गुलामी की जड़ में मूर्ति-पूजा का यही पाखंड और अंधविश्वास है जो इसको कमजोर और अंधविश्वास रहित बनाता है। उन्होंने मूर्ति पूजा के भयानक नतीजे को देखते हुए ही घोर विपत्तियां सह कर इसका विरोध किया और मूर्ति पूजा का खंडन किया था। आर्य समाज की स्थापना केवल इसी उद्देश्य से की गई थी और प्रत्येक आर्यसमाजी को निर्देश दिया था कि वह विद्या की वृद्धि और अविद्या का नाश करें। आज फिर उन ताकतों ने सिर उठा लिया है जो मूर्ति पूजा के बहाने अंधविश्वास और पाखंड को भारत में फैला रहे हैं। हमारी गुलामी और गरीबी के लिए यह तर्कहीन और बौद्धिकता विहीन मूर्ति-पूजा ही है जो हमें कमजोर बनाती है और हमारे गौरव को चोट पहुंचाती हैं।

महर्षि स्वामी दयानन्द जी ने इस बात को समझा कि भारत की गुलामी की जड़ में मूर्ति-पूजा का यही पाखंड और अंधविश्वास है जो इसको कमजोर और अंधविश्वास रहित बनाता है। उन्होंने मूर्ति पूजा के भयानक नतीजे को देखते हुए ही घोर विपत्तियां सह कर इसका विरोध किया और मूर्ति पूजा का खंडन किया था। आर्य समाज की स्थापना केवल इसी उद्देश्य से की गई थी और प्रत्येक आर्यसमाजी को निर्देश दिया था कि वह विद्या की वृद्धि और अविद्या का नाश करें।

21 सितम्बर 1995 वर्तमान इतिहास का वह काला दिन है जब एक बार फिर पाखंड और अंधविश्वास की ताकतों ने भारत में अपना पूरा षड्यंत्र रचा और दूर संचार व्यवस्था का लाभ उठाते हुए इस खबर को देख-विदेश में जमकर प्रसारित किया कि भगवान गणेश की मूर्ति आज दुग्धपान कर रही है। इस अफवाह का सूत्रपात कहां से हुआ, यह आज तक किसी ने जानने की कोशिश नहीं की। बस, लाखों-करोड़ों लोग मंदिरों की आर दौड़ पड़े और देखते ही देखते गणेश की मूर्ति को दुग्ध पिलाने के लिए लम्बी कतारें पूरे भारत वर्ष में लग गई। गणेश जी सचमुच दूध पी रहे हैं, ऐसा मानने वालों की संख्या उस दिन करोड़ों में थी। हालांकि शाम होने तक वैज्ञानिकों ने वास्तविकता सामने रख दी थी लेकिन इसको सच मानने वालों में कमी नहीं आई। हैरानी की बात यह है कि इस पाखंड को मानने वाले अनपढ़ देहाती व गंवार नहीं, बल्कि पढ़े-लिखे मध्यम व उच्च वर्ग के लोग ज्यादा हैं जो अन्य लोगों के लिए आदर्श नायक होते हैं। जो विज्ञान और उसके आधार सिद्धांतों को जानते और मानते हैं। इस पाखंड में तर्क, विवेक और समझदारी की दीवार को पूरी तरह से गिरा दिया। इसलिए हम मानते हैं कि यह देश के लिए अशुभ संकेत है कि इतनी बड़ी जनसंख्या को कुछ लोगों ने बेवकूफ बना दिया, जिससे नई पीढ़ी के मानस पर बुरा प्रभाव पड़ा है। उस समय हमने भारत सरकार से मांग की थी कि वह इस पाखंड को फैलाने वालों की जानकारी हासिल करे कि वह कौन लोग हैं जिन्होंने इस अफवाह को फैलाया, यह किन देशद्रोही धूर्तों की सोची समझी चाल है, इस बात की जांच देश की सर्वोत्तम जांच एजेंसी से करवानी चाहिए ताकि सच्चाई का पता लग सके और ऐसे समाज व देश के दुश्मनों को सख्त सजा मिल सके। पर दुर्भाग्यवश सरकार ने कुछ नहीं किया और अंधविश्वास और पाखंड के नये-नये तरीके निकाल कर लोगों को गुमराह किया जा रहा है।

OO

चरित्र निर्माता : स्वामी दयानन्द

पं. हरिदेव आर्य

जालंधर की बात है, सरदार विक्रम सिंह ने स्वामी जी से ब्रह्मचर्य का बल पूछा। उस समय तो स्वामी जी ने कुछ अधिक न कहा, परंतु एक दिन वे घोड़ों की बग्घी में बैठकर चलने लगे तो स्वामी जी ने तुरंत पीछे से बग्घी का पहिया पकड़ लिया, बग्घी आगे न बढ़ सकी। कोचवान ने घोड़ों पर चाबुक पर चाबुक जमाए पर घोड़े एक पग भी न बढ़ सके। सरदार महोदय ने पीछे देखा तो स्वामी जी पहिया पकड़े हुए थे। पहिया छोड़ते हुए स्वामी जी ने कहा- ब्रह्मचर्य के बल का एक दृष्टांत तो आपको मिल गया।

काशी की घटना है कि इस्लाम मत का खंडन सुनकर एकांत में गंगा तट पर बैठे हुए स्वामी जी को दो मुसलमान बगल से पकड़कर गंगा में फेंकने लगे तो स्वामी जी ने उन दोनों को अपनी भुजाओं से ऐसा दबा लिया कि वे न छूट सके और स्वामी जी की कूद के साथ गंगा में डुबकियां लेने लगे। कासगंज में एक सड़क पर बहुत मनुष्यों की भीड़ देखी, बहुत से व्यक्ति इधर-उधर रुके खड़े थे। बीच में बड़े-बड़े दो सांड लड़ रहे थे, अत: मार्ग रुक गया था। स्वामी जी लोगों के मना करने पर भी आगे बढ़े और उन दोनों सांडों के सींग पकड़कर उन्हें अलग-अलग कर दिया।

जब अंतिम बार काशी गये तो एक दिन सैर से लौटते हुए एक बैलगाड़ी को कीचड़ में धंसे हुए देखा। हांकने वाला सोटे पर सोटे बरसा रहा था किंतु बैल हिलने में भी न आते थे। महर्षि जी बड़े दु:खी हुए। स्वयं कीचड़ में उतरे। बैल छुड़वा दिये और स्वयं गाड़ी को खींचकर बाहर कर दिया। जो काम बैलों की दोहरी शक्ति न कर सकी वह एक अकेले ब्रह्मचारी की भुजाओं ने सहज में वश कर दिया।

मिर्जापुर में छोटूगिरी पुजारी ने गुण्डों को स्वामी जी के पास भेजा। वे स्वामी जी को अण्ड-बण्ड बोलते रहे। स्वामी जी ने उठकर ऐसा हुक्कार किया कि वे कांपने लगे और मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़े। सचेत होने पर स्वामी जी ने समझा-बुझाकर उन्हें विदा किया। कुछ चिंता मत करो। जिनका सहाय धर्म है, उसी का सहाय परमेश्वर है। जब बुरे बुराई न छोड़े तो भले भलाई क्यों छोड़े।

मथुरा में गुरु विरजानंद के यहां अध्ययनकाल में दयानन्द के ब्रह्मचर्य की धाक बंधी हुई थी। एक बार यमुना में स्नान कर तट पर ध्यानावस्थित बैठे हुए दयानन्द के चरणों में एक देवी ने स्नान किये हुए अपना गीला सिर रखकर श्रद्धा से प्रणाम किया तो उन्होंने माता! माता! कह गोवर्धन पर्वत के निर्जन स्थान में जाकर उपवास और गायत्री जाप से तीन दिन प्रायश्चित किया कि कहीं स्त्री की मूर्ति पवित्र मानस पट पर चित्रित न हो जावे।

विरोधियों द्वारा दयानन्द जी को पतित करने के लिए एक वेश्या को बहका कर भेजा। वह स्वामी जी के पास जाकर बोली, महाराज! मैं आप जैसा अपना पुत्र चाहती हूं। वेश्या की भावना स्पष्ट है परंतु दयान्द ने उत्तर दिया- अच्छा आज से मैं तेरा पुत्र और तू मेरी माता। बस, इतना कहना था कि उसकी काया पलट हो गई और वह चरणों में गिर पड़ी।

ओखी मठ के महंत ने चेले होने और उत्तराधिकारी बनाने का लोभ दयानन्द जी को दिया परंतु उन्होंने उत्तर दिया कि मेरे घर की सम्पत्ति इस मठ की सम्पत्ति से कम न थी, उसे क्यों छोड़ता? सन् 1877 में लाहौर में स्वामी जी को महाराजा काश्मीर ने पं. मनफूल द्वारा कहलवाया कि आप मूर्तिपूजा का खंडन न करें तो मेरा कोष आप को समर्पित है। महर्षि ने उत्तर दिया कि मैं काश्मीर पति को संतुष्ट करूं या वेद प्रतिपादित ब्रह्म को? लोभवश सत्य को न छोड़ा।

महाराणा उदयपुर ने स्वामी जी को कहा, आप एक लिङ्ग के मंदिर के महंत बन जायें, यह राज्य भी उसके अधीन है। स्वामी जी ने झट उत्तर दिया, आप मुझसे सर्वशक्तिमान परमेश्वर की आज्ञा को भंग कराना चाहते हैं? मंदिर तो क्या आपके इस राज्य से मैं एक दौड़ में पार हो सकता हूं, किंतु विश्वविराट परमेश्वर की आज्ञा का उल्लंघन करके, सत्य का प्रचार छोड़कर किस कोने में जाऊंगा? मैं कदापि सत्य से नहीं हट सकता।

कर्णवास की घटना है, वहां के राव कर्णसिंह स्वामी जी से रासलीला के खंडन के कारण विरोधी हो गये। स्वामी जी के पास आकर तलवार का भय दिखलाया और तलवार निकालकर आक्रमण करने को जैसे ही उद्यत हुआ तो निर्भीक संन्यासी ने गरज कर उसके हाथ से तलवार छीनकर भूमि पर एक हाथ से ऐसे जोर से टेकी कि वह टुकड़े-टुकड़े हो गई। राव कर्णसिंह को क्षमादान दिया। ऐसे थे हमारे स्वामी दयानन्द जी! शत्-शत् नमन ○○

वैदिक चिंतन : प्रत्येक जन विद्यावान हो

स्वामी चक्रपाणि

वैदिक ऋषियों ने ज्ञान और संस्कार की सार्वभौमिक उपादेयता को स्वीकार किया है। वह वर्गीय आग्रह का विषय नहीं है। प्रत्येक मानव का यह स्वाभाविक अधिकार है कि वह अधिक से अधिक विद्या अर्जित करे। वेदों में ऋषि आह्वान करते हैं कि मानव! तू अज्ञान से ज्ञान की ओर चल। भारतीय दृष्टि में न तो ज्ञान की कोई सीमा है और न ही धर्म की। धर्म एक व्यापक कर्तव्य बोध है। विद्या को धर्म का ही एक अंग बताया गया है। मनुस्मृतिकार कहते हैं कि धर्म का प्रयोजन विद्या सिद्ध करती है। समाज ज्ञानवान हो ताकि वह संस्कारवान बन सके, इसलिए आचार-विचार को उच्च वैचारिक मर्यादाओं से अनुशासित किया गया है। ऋग्वेद में ऋषि कामना करते हैं कि हे मनुष्य! यह सूर्य की ज्योति मेरे जीवन का लक्ष्य है। तू इसको समझ और इसको आध्यात्मिक कार्यों और जीवन संघर्ष में प्रकट कर। ऋषि सूर्य को ज्ञान का प्रतीक मानते हैं। वह अज्ञानता के अंधकार को समाप्त कर देता है। इसलिए साधक प्रार्थना करता है कि मैं सूर्य के समान तेजस्वी बनूं।

मानव में देवत्व के विकास की संभावना को हमारे चिंतन में स्वाभाविक एवं सहज माना गया है। देवता का पद प्राप्त करने के लिए दो आयामों से गुजरना पड़ता है। प्रथम ज्ञानवान होना, दूसरा उसके अनुकूल सात्विक व्यवहार करना। ऋग्वेद में कहा गया है कि देव पाने की इच्छा करने वाले मनुष्य विद्या की देवी का स्मरण करते हैं। यज्ञ के विस्तार में भी ज्ञानी लोग विद्या का सहारा लेते हैं। सत्कर्मी, सत्कर्म के अनुष्ठान के लिए ज्ञान का आश्रय लेते हैं। विद्या ही उपासक को इष्ट फल प्रदान करती है।

वेदों के अनुसार मनुष्य का पूरा जीवन ही एक यज्ञ है, जिसका अनुष्ठान विद्या से होता है। जब ऋषि यज्ञ विस्तार का संकल्प लेते हैं तो उसका अभिप्राय ज्ञान के विभिन्न अंगों का अध्ययन, अध्यापन और अनुसंधान कर स्वयं को समाज के लिए उपयोगी सिद्ध करने से हैं। वेदों में कितनी सुंदर बात कही गई है कि हे ज्ञान देने वाली देवी! तू हमारे लिए कल्याणकारी हो और हम शेष जन के लिए कल्याणकारी बनें। जीवन में कैसी भी परिस्थिति हो, आयु का कोई सा भी मोड़ हो, विद्या पाने में अग्रणी रहें, न पीछे रहें और न ही वंचित। संसार में पाप, अन्याय, शोषण और असमानता के भावों का उदय केवल इसीलिए है क्योंकि ज्ञान का प्रकाश और निहितार्थ मानव तक नहीं पहुंच रहा है। इसलिए जिज्ञासु और पवित्र मनों की आवश्यकता है जो ज्ञानियों के पास जाए और स्वयं भी ज्ञानी हो जाए। जो ज्ञान की अवहेलना करता है वही सम्पूर्ण पापवृत्तियों का वाहक है। शायद ही विश्व के किसी चिंतन में ज्ञान को इतना महत्व दिया गया हो। भारतीय मनीषियों ने अध्यात्मिक जीवन के लिए तीन चरणों की व्यवस्था की है, अवलोकन, निरीक्षण और फिर स्वीकृति। निरीक्षण जिसमें सम्पूर्ण विवेचना का भाव निहित है, जो ज्ञान से ही संभव है।

ऋषि कहते हैं कि विद्या अपने ज्ञान से इस समस्त संसार को प्रकाशित कर देती है और सब प्रकार की बुद्धि को चमका देती है। इसीलिए विद्या को परम सत्य, विनम्रता की प्रेरणा, विवेकशीलता का कारण और सात्विक आचरण पर चलने के लिए प्रोत्साहन देने वाली कहा गया है। महाभारत काल में भी सर्वजन से यह आह्वान किया है कि वे विद्या के मार्ग की खोज करें और उसको अपना लक्ष्य मानें क्योंकि आगे सूर्य की अखण्ड ज्योति है। पूजनीय और उपयोगी वही हो सकता है जिसने ज्ञान प्राप्त किया हो। तपस्वी होने का महत्व तब ही है जब वह ज्ञान की देवी का साक्षात्कार कर चुका हो।

वेदों में कितनी सुंदर बात कही गई है कि- हे ज्ञान देने वाली देवी! तू हमारे लिए कल्याणकारी हो और हम शेष जन के लिए कल्याणकारी बनें। जीवन में कैसी भी परिस्थिति हो, आयु का कोई सा भी मोड़ हो, विद्या पाने में अग्रणी रहें, न पीछे रहें और न ही वंचित। संसार में पाप, अन्याय, शोषण और असमानता के भावों का उदय केवल इसीलिए है क्योंकि ज्ञान का प्रकाश और निहितार्थ मानव तक नहीं पहुंच रहा है।

OO

आत्मा और परमात्मा

नवीन आर्य

वैदिक सिद्धान्त के अनुसार तीन सत्तायें नित्य स्वीकार की गयी हैं। ईश्वर, आत्मा और प्रकृति। इनमें ईश्वर और आत्मा चेतन हैं, जबकि प्रकृति जड़ है। इन तीनों में कुछ समानतायें भी हैं और कुछ भेद भी। तीनों की समानता यह है कि तीनों अनादि, नित्य व सत्तात्मक हैं। भेद यह है कि ईश्वर एक है, आत्मा अनेक हैं। ये दोनों ही किसी का उपादान कारण नहीं बनतीं परन्तु प्रकृति जड़ होने से अन्य भौतिक वस्तुओं का उपादान कारण बनती है।

आत्मा का स्वरूप : न्याय दर्शन के अनुसार 'इच्छा द्वेष प्रयत्न सुखदु: ज्ञानानि आत्मनो लिंगमिति' अर्थात इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख, दु:ख और ज्ञान आत्मा के लक्षण हैं। इनके माध्यम से आत्मा के अस्तित्व का बोध होता है। 'प्राणापाननिमेषोन्मेषजीवन मनो गातीन्द्रियान्तरविकारा: सुख दु:खेच्छा द्वेष प्रयात्नाश्चात्मनो लिंगानि' (वैशेषिक दर्शन - 3.2.3.) अर्थात प्राण को बाहर निकालना, प्राण को बाहर से भीतर लेना, आंख मींचना, आंखें खोलना, प्राण धारण करना, निश्चय करना, स्मरण करना और अहंकार करना, चलना सब इन्द्रियों को चलाना, क्षुधा-तृषा, हर्ष-शोक आदि का होना जीव के लक्षण है। 'जन्मादिव्यवस्थात: पुरुषबहुत्वम्' (सांख्य-1.149) अर्थात संसार में एक ही काल में किसी का जन्म हो रहा है, किसी की मृत्यु हो रही है, इन्हें देख कर यही ज्ञात होता है कि आत्माएं अनेक हैं। 'इदनीमिव सर्वत्र नात्यन्तोच्छेद:' (सांख्य-1.151) अर्थात वर्तमान समय में पुरुषों का अत्यन्त अभाव न होना ही इस बात का प्रमाण है कि आत्माएं मुक्तिकाल को भोग कर पुन: जन्म लेती हैं।

इस विषय में महर्षि दयानन्द सरस्वती सत्यार्थ-प्रकाश में लिखते हैं कि 'दोनों (आत्मा-परमात्मा) चेतन स्वरूप हैं, स्वभाव दोनों का पवित्र है, अविनाशी और धार्मिकता आदि है परन्तु परमेश्वर के सृष्टि-उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय, सबको नियम में रखना, जीवों को पाप-पुण्य रूप फलों का देना आदि धर्मयुक्त कर्म हैं और जीव के संतानोत्पत्ति, उनका पालन, शिल्प-विद्या आदि अच्छे बुरे कर्म करना है।

आत्मा परिछिन्न है, जीव का स्वरूप अल्पज्ञ, अल्प अर्थात् सूक्ष्म है। आत्मा जब शरीर धारण करती है तभी उसका नाम जीवात्मा होता है। वह अपने द्वारा कृत कर्मों का फल स्वयं भोगती है, 'सही तत्फलस्य भोक्तेति' अन्य नहीं। आत्मा अच्छे-बुरे कर्मों को करने में स्वतंत्र हैं 'स्वतन्त्र: कर्ता' किन्तु कृत कर्मों के फल भोगने में पराधीन है इसीलिए अच्छे कर्मों का फल सुख और बुरे कर्मों का फल दु:ख रूप में भोगना पड़ता है। यह संक्षेप में आत्मा का स्वरूप है।

परमात्मा का स्वरूप : महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के शब्दों के अनुसार, ईश्वर सच्चिदानंद स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। इसके अतिरिक्त स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश में अनेकों गुण वाचक नाम से ईश्वर के स्वरूप को दर्शाया है, जैसे कल्याणकारी होने से शिव और दुष्टों को पीड़ा देने से रूद्र आदि।

योग दर्शन में बताया गया है कि 'क्लेशकर्मविपाकाशयै: अपरामृष्ट: पुरुष विशेष: ईश्वर:' अर्थात् अविद्या आदि पांच क्लेश, सकाम कर्म, उन कर्मों के फल, और संस्कारों से रहित जीवात्माओं से भिन्न स्वरूप वाला ईश्वर होता है। और भी कहा - 'स एष पूर्वेषामपि गुरु: कालेनानवच्छेदात्। वह ईश्वर गुरुओं का भी गुरु, आदि गुरु है। 'तस्य वाचक: प्रणव:' अर्थात् उस परमेश्वर का मुख्य नाम है 'ओ३म्', उसी की उपासना करनी चाहिये ।

वेद में कहा भी गया है- 'न द्वितीयो न तृतीयश्चतुर्थो नाप्युच्यते' (अथर्ववेद) अर्थात् ईश्वर केवल एक ही है, न दो है न तीन है, इस प्रकार दो, तीन आदि संख्या का प्रतिषेध करके अनेक ईश्वर के मत का खंडन कर दिया है ।'मा चिदन्यत् विशंसत सखायो मा रिषन्यत...अर्थात् हे विद्वानो! व्यर्थ के चक्कर में मत पड़ो, परमैश्वर्यशाली परमात्मा को छोड़ कर और किसी की स्तुति मत करो। तुम सब मिल कर केवल एक आनंदवर्धक परमेश्वर की ही स्तुति करो। OO

सुखी मीन जे नीर अगाधा

डॉ. रामानुज मिश्र

एक आश्रम के प्रवेश द्वार पर लिखा है, ईश्वर में प्रविष्ट होइये। प्रश्न है, ईश्वर में प्रविष्ट होना कैसा, जब वह कण-कण में व्याप्त है- ईशावास्यमिदं सर्वम्...। मान्यता है कि ईश्वर सार्वभौम और सर्वनिष्ठसत्ता है, तथापि इससे यह सिद्ध नहीं होता कि हम स्वयं ईश्वर में है। यह पहेली जितनी आध्यात्मिक है, उतनी ही वैज्ञानिक भी। सब में ईश्वर है, इससे बेहतर अवधारणा है कि ईश्वर में सब है, जैसे सफेदी में दूध नहीं, दूध में सफेदी है। यह एक दार्शनिक बिंदु है। यही तात्विकभाव आध्यात्मिक ऊर्जा का स्रोत है।

इसी परिप्रेक्ष्य में रामचरितमानस की चौपाई कुरेदती है, हमारे चिंतन को- 'सुखी मीन जे नीर अगाधा। जिमिहरि सरनन एकउबाधा।' मीन प्रतीक है योगी का, साधक या भक्त का। यहां तुलसीदास जी ने गागर में सागर भरा है। मीन के जीवन की गति अबाध है, वह विराट में लीन है। उसकी स्थिति ईश्वर में प्रविष्टि जैसी है। असीम में उसे परिशान्ति प्राप्त है। वाह्य प्रपंच से उसका क्या सरोकार? वहां तो मृत्यु है, विनाश है, क्षणभंगुरता और नश्वरता है। देवता तक सनातन नहीं, अविनाशी नहीं। स्वर्ग के भोग भी नश्वर हैं। कीट-पतंग, जड़-जंगम सब नश्वर है। मीन तो उस भाव में सम्पन्न है जिसका प्रतिफल संरक्षण है।

भावे विद्यतेदेवः अर्थात अविदित परमात्मा भी भाव से विदित हो जाता है। इसी भाव को भगवान श्रीकृष्ण ने श्रद्धा कहा है। अनुराग के रूप में यही भाव अर्जुन है। भाव ही भरोसा, जीवन और भयमुक्ति है। यह बाधारहित और निरापद है। इच्छाओं से रहित होना, अकिंचन होना समर्पण है। कामनाओं से ही ज्ञान का अपहरण होता है। इन्हीं का अंत भ्रम का नाश है। समर्पण ही प्रत्यक्ष अनुभूति अर्थात ज्ञान का उपकरण है। वैसे साधना में अंततः प्रकृति के तीनों गुण का भी लोप हो जाता है, जिनके वशीभूत यावन्मात्र-जगत है। देवताओं की पूजा के फल भी नाशवान हैं। देवता मात्र परिमार्जित सत्ता हैं जिन्हें गुणों का विकार कहा गया है। योगेश्वर कृष्ण के अनुसार देवी-देवताओं की पूजा मूढ बुद्धि की देन है। यह किसी पूर्वाग्रही को अटपटा भी लग सकता है। किंतु गीता के अनुसार ही ब्रह्मलोक तक के भोग क्षणिक और नाशवान हैं। यही गति स्वर्ग के भोग की भी है। इससे उनकी अस्तित्वहीनता स्पष्ट होती है। ईश्वर को मंदिर-मस्जिद, चर्च या अन्यत्र खोजना समय नष्ट करना है। ऐसी पूजा विहित नहीं, भले ही क्षणिक और नाशवान फल मिल जाते हैं। इसी कारण कदाचित मीन को महासागर ही रास आया। नदियों की पूजा से उसका अर्थ सिद्ध न हो सका। वह तो अगाध नीर से पहले तृप्त ही नहीं। यहां तनाव मुक्ति है। उसकी बुद्धि आस्तिक है, क्योंकि उसे एक इष्ट में सच्ची आस्था है। एक का होकर रह जाना ही उसका सिद्धांत और संकल्प है। वही उसका इष्ट और स्वामी है।

मूल अविनाशी की प्राप्ति तो साधक के उसके जीवन का ध्येय है। इच्छाएं उसकी प्रगति में बाधक हैं। हरिशरण हैं, अस्तु आशा क्या, ममता क्या, संताप कैसा? इन सबसे परे है शरणागत। शरण होना ही साधक के लिए सतत-स्मरण, भजन अथवा अनन्य भक्ति है। यहां तो संकल्पों तथा संस्कारों के लिए भी स्थान नहीं। यहां हरिशरण या ईश्वर में प्रविष्टि का प्रतिफल दैवी-सम्पदा का उत्कर्ष और आसुरी सम्पदा का शमन है। पूर्ण समर्पण में निषेध की स्थिति विद्यमान होती है, जहां मन का निरोध और विरुद्ध मन का भी विलय है। योगी का लक्ष्य तो मात्र आत्मबोध है। उसकी लगन एक ईश्वर, ब्रह्म में है जिसका मुख्य नाम ओ३म् है।

मीन के जीवन की गति अबाध है, वह विराट में लीन है। उसकी स्थिति ईश्वर में प्रविष्टि जैसी है। असीम में उसे परिशान्ति प्राप्त है। वाह्य प्रपंच से उसका क्या सरोकार? वहां तो मृत्यु है, विनाश है, क्षणभंगुरता और नश्वरता है। देवता तक सनातन नहीं, अविनाशी नहीं। स्वर्ग के भोग भी नश्वर हैं। कीट-पतंग, जड़-जंगम सब नश्वर है। मीन तो उस भाव में सम्पन्न है जिसका प्रतिफल संरक्षण है। भावे विद्यतेदेवः अर्थात अविदित परमात्मा भी भाव से विदित हो जाता है। इसी भाव को भगवान श्रीकृष्ण ने श्रद्धा कहा है। अनुराग के रूप में यही भाव अर्जुन है। भाव ही भरोसा, जीवन और भयमुक्ति है। यह बाधारहित और निरापद है। इच्छाओं से रहित होना, अकिंचन होना समर्पण है। कामनाओं से ही ज्ञान का अपहरण होता है। इन्हीं का अंत भ्रम का नाश है। समर्पण ही प्रत्यक्ष अनुभूति अर्थात ज्ञान का उपकरण है।

सुख का अनुभव

आदित्य प्रकाश गुप्त
प्रधान, आर्यसमाज, सहारनपुर (उप्र)

प्रत्येक व्यक्ति सुखी होना चाहता है परंतु सुख प्राप्ति के कार्य नहीं करना चाहता, जिसके पास आनंद है उसके निकट होते हुए भी उसे प्राप्त करने का प्रयास नहीं करना चाहता। ईश्वर सत, चित्त, आनंद स्वरूप है, उसे प्राप्त करके ही हम सुखी रह सकते हैं। ईश्वर प्राप्ति का साधन योग साधना है।

योग के पहले दो अंग यम, नियम हैं। इनको दैनिक जीवन अर्थात अपने व्यवहार काल में आचरण करना चाहिए। शेष अंगों पर हमें निरंतर अभ्यास करते रहना चाहिए। महर्षि दयानन्द जी महाराज सत्यार्थ प्रकाश में लिखते हैं कि जो उपासना का आरम्भ करना चाहे, वह किसी से वैर न करे। हम ईश्वर को ज्ञान चक्षुओं से देखना चाहते हैं। ईश्वर को आंख से देखने का प्रश्न कहां उठता है जबकि हम अपनी आत्मा को शरीर से निकलते नहीं देख सकते । ईश्वर ज्ञान की वस्तु है, उसका अनुभव आत्मा में योग द्वारा होता है। वैसे ईश्वर का प्रत्यक्ष तभी होता है जब आत्मा, मन और इंद्रियों को किसी विषय में लगाता है और संसार की रचना, ज्ञान आदि विशेष से ईश्वर का प्रत्यक्ष भी होता है, तब चोरी आदि पाप कर्म करने से मन के भीतर से भय, लज्जा, शंका होती है और यज्ञ आदि धार्मिक कार्य, परोपकार करने पर मन में अभय, निशक्त और आनंद का अनुभव जीवात्मा की ओर से नहीं, परमात्मा की ओर से होता है, जब जीवात्मा शुद्ध होकर परमात्मा का विचार करता है तो उसी समय दोनों प्रत्यक्ष होते हैं।

जब व्यक्ति अपने जीवन अर्थात व्यवहार में यम, नियमों पर आचरण आरम्भ करता है, जब दोनों समय ईश्वर का धन्यवाद देना आरम्भ करता है तो ब्रह्म यज्ञ (संध्या) आरम्भ कर देता है। ब्रह्म यज्ञ के मुख्य दो भाग हैं, एक तो प्रातः सायं ध्यान लगाकर अपने दैनिक व्यवहार पर चिंतन कर निरंतर अपनी बुराइयों को दूर करते रहना दूसरा संध्या के मंत्रों का पाठ जप विधि से करना। जप की विधि भी आज विधान पूर्वक नहीं रही।

एक दिन एक व्यक्ति मेरे पास आया और कहने लगा मैंने एक लाख बार गायत्री मंत्रों का जाप कर लिया है। मैंने उससे प्रश्न किया क्या अर्थ सहित जाप किया है, उसने उत्तर दिया नहीं। मैंने उनको बताया भाई यह जप की विधि नहीं है और कहा जप की विधि यह है- सांस भरकर, ओ३म् बोलकर, मन को ईश्वर में लगायें और साथ-साथ गायत्री मंत्र या अन्य किसी मंत्र के द्वारा भी एक-एक शब्द के अर्थ का चिंतन करें, यही जप वैदिक विधि है। यह प्रभु मिलन की विधि है। निरंतर अभ्यास से हमारा ज्ञान बढ़ता जाता है। गायत्री मंत्र में अंतिम शब्दों में हम परमात्मा से बुद्धि को सन्मार्ग पर चलाने की प्रार्थना करते हैं। इसी विषय में किसी कवि ने लिखा है-

वही दुःख उठाये जो प्रभु को भुलाये।
समय कीमती को भजन बिना बिताये॥

'विद्या दान सबसे बड़ा दान है'

आर्ष गुरुकुल, बी-69, सेक्टर-33, नोएडा ''आर्ष गुरुकुल शिक्षा प्रबंध समिति'' द्वारा संचालित वैदिक शिक्षा का उत्कृष्ट केंद्र, आर्य समाज बी-69, सेक्टर-33, नोएडा में स्थापित पिछले 24 वर्षों से ब्रह्मचारियों को विद्वान बना रहा है। जो आर्य समाज के प्रचार-प्रसार में सहयोग कर रहे हैं। इस समय 100 ब्रह्मचारी शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। आर्ष गुरुकुल के प्रधानाचार्य डॉ. जयेन्द्र कुमार के नेतृत्व में दिन-रात चौगुनी उन्नति की ओर अग्रसर गुरुकुल को सहयोग देकर 'विद्या दान सबसे बड़ा दान है' में सहयोगी बनें। संस्था में निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था है। कृपया उदार हृदय से आप सहयोग 'यूनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया', नोएडा सेक्टर-33 में खाता संख्या A/C No. 1483010100282, IFSC- UTB10SCN560 में भेजकर सूचित करें ताकि आपको पावती (रसीद) भेजी जा सके। धन्यवाद!

(आर्य कै. अशोक गुलाटी)
प्रबंध संपादक, 'विश्ववारा संस्कृति', मो. : 9871798221, 7011279734

आर्यसमाज नोएडा का भव्य वार्षिकोत्सव सम्पन्न

आर्यसमाज, आर्षगुरुकुल एवं वानप्रस्थाश्रम बी-69, सेक्टर-33, नोएडा का भव्य वार्षिकोत्सव बुधवार 5 दिसम्बर से वैदिक यज्ञ के साथ आचार्य डॉ. जयेन्द्र कुमार जी के ब्रह्मत्व में आर्यसमाज नोएडा में सम्पन्न हुआ। यज्ञ के मंत्री श्री जितेन्द्र आर्य एवं श्रीमती कविता आर्या रहे। यज्ञ में आर्यजगत के सुप्रसिद्ध भजनोपदेशक श्री दिनेश आर्य 'पथिक' ने ईश्वर भक्ति के सुन्दर गीतों का श्रवण कराया। तदुपरान्त आचार्य डॉ. वेदपाल जी ने अपने सुन्दर वक्तव्य द्वारा यज्ञ पर प्रकाश डाला उपस्थित सभी लोगों को आनन्द की अनुभूति कराई। यज्ञोपरांत प्रसाद की व्यवस्था श्री रवीन्द्र द्वारा की गई।

सांयकालीन सभा ऋग्वेदीय पारायण यज्ञ के साथ आरम्भ की गई। वेदपाठ आर्ष गुरुकुल नोएडा के ब्रह्मचारियों द्वारा किया गया जिसमें मुख्य यजमान जितेन्द्र आर्य एवं कविता आर्या रहीं। ध्वजारोहण और दीप प्रज्जवलन श्री स्वामी विश्वानन्द जी के कर कमलों द्वारा किया गया। जिसमें दिनेश आर्य पथिक के गीत एवं आचार्य वेदपाल जी का प्रवचन 'पुनर्जन्म और ईश्वरीय न्याय व्यवस्था' पर हुआ। सांयकालीन भोजन की व्यवस्था श्री सतबीर आर्य व श्री सुखबीर आर्य सर्फाबाद द्वारा की गई।

6 दिसम्बर प्रातः यज्ञ आर्यसमाज नोएडा में आचार्य जी के ब्रह्मत्व में सम्पन्न हुआ। जिसमें आचार्य वेदपाल जी द्वारा ईश्वर के विशेष गुणों की चर्चा की गई। प्रसाद की व्यवस्था श्री पतन सिंह द्वारा की गई।

सांयकालीन सभा ऋग्वेदीय पारायण यज्ञ के साथ आरम्भ की गई। तदोपरांत श्री दिनेश आर्य 'पथिक' जी के गीतों का आनन्द लेने के पश्चात आचार्य वेदपाल जी ने 'जीवन में सुख शान्ति का मार्ग' कैसे प्राप्त किया जा सकता है विषय पर विस्तार से चर्चा की जिससे सभी का मन प्रसन्न हुआ। कार्यक्रम के संयोजक डॉ. आचार्य जयेन्द्र जी एवं जितेन्द्र आर्य ने सभी का धन्यवाद करते हुए शांतिपाठ के साथ सभा का समापन किया। सांयकालीन भोजन की व्यवस्था श्रीमती डा. प्रियंका एवं डा. अनिरुद्ध सेतिया सेक्टर-20 द्वारा की गयी।

7 दिसम्बर प्रातः यज्ञ आचार्य जी के ब्रह्मत्व में सम्पन्न हुआ। यज्ञोपरान्त श्री दिनेश आर्य ''पथिक'' जी ने प्रभु भक्ति के गीतों का श्रवण कराया एवं आचार्य वेदपाल जी ने ऋग्वेद के मंत्रों की व्याख्या की और जीवन को वेद मार्ग पर चलाने का संदेश दिया। यज्ञ का प्रसाद श्री नरेंद्र सूद के सौजन्य से हुआ।

सांयकालीन सभा ऋग्वेदीय पारायण यज्ञ के साथ आरम्भ की गई। तत्पश्चात दिनेश आर्य पथिक जी ने अपने क्रांतिकारी गीतों से सभी को आनंदित किया। गुरुकुल के ब्रह्मचरियों ने भी देशभक्ति गीत सुनाये। आचार्य वेदपाल जी अपने ओजस्वी वक्तव्य में शहीदों को नमन किया और अपनी संतानों को संस्कारी बनाने और चरित्र की शिक्षा देने पर जोर देने को कहा। विशिष्ट अतिथि श्री सुधीर मिढ्ढा जी ने अपने विचार व्यक्त कर आर्यसमाज व गुरुकुल के कार्यों की सराहना की। सांयकालीन भोजन व्यवस्था श्रीमती सुनीता मीना, राहुल मीना व रोहित मीना एवं समस्त मीना परिवार सेक्टर-19, नोएडा द्वारा की गई।

दिनांक 8-12-2018 को प्रातः यज्ञ आर्यसमाज नोएडा में सम्पन्न हुआ। यज्ञ के अवसर पर आचार्य वेदपाल जी का प्रवचन एवं दिनेश पथिक जी के गीतों का श्रवण सभी ने किया। यज्ञ का प्रसाद श्री कठपालिया के सौजन्य से हुआ।

प्रथम सत्र- 9:30 बजे से 1:30 बजे तक महर्षि दयानन्द उपकार एवं भ्रष्टाचार उन्मूलन सम्मेलन ध्वजारोहण के साथ प्रारम्भ हुआ जिसकी अध्यक्षता स्वामी विश्वानंद जी ने की। कार्यक्रम में दिनेश आर्य पथिक जी ने ऋषि के उपकारों के गीत सुनाये तथा डॉ. नरेन्द्र वेदालंकार, डॉ. वीरपाल वेदालंकार, आचार्य वेदपाल जी ने ऋषि के जीवन पर प्रकाश डाला। एवं आचार्य डॉ. जयेन्द्र कुमार जी ने महर्षि के ऊपर ओजस्वी कविता सुनायी। अंत में अध्यक्ष महोदय ने सभी का धन्यवाद किया तथा संयोजक जितेन्द्र आर्य जी ने ऋषि का भावपूर्ण स्मरण कर सभा का शांतिपाठ के साथ समापन किया। प्रीतिभोज श्री योगेश एवं सरला अरोड़ा सेक्टर-44 नोएहा के सौजन्य से हुआ।

द्वितीय सत्र- आर्य महिला सम्मेलन श्रीमती डा. मंजू नारंग जी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ जिसमें मुख्य वक्ता श्रीमती प्रतिभा सिंघल जी ने 'वर्तमान राष्ट्रीय परिपेक्ष्य में महिलाओं की भूमिका' विषय पर अपने विचारों के द्वारा नारी शक्ति के उपकारों को बताया। श्रीमती शकुंतला सेतिया द्वारा मार्गदर्शन दिया गया तथा श्रीमती मधु भसीन द्वारा भजन प्रस्तुत किया गया। आर्यसमाज नोएडा की प्रधाना

गायत्री मीना जी ने अपने विचारों से नारी की महानता को बताया। अंत में महिला समाज की प्रधाना ओमवती गुप्ता जी ने अपने वक्तव्य में नारी जाति के गौरव को बताया। कार्यक्रम का संयोजन व कुशल संचालन मंत्री श्रीमती आदर्श बिश्नोई जी ने किया। कार्यक्रम के बाद 'प्रसाद वितरण' माता ओमवती गुप्ता प्रधान महिला समाज नोएडा के सौजन्य से हुआ।

तृतीय सत्र- सत्यार्थ प्रकाश सम्मेलन के मुख्य अतिथि श्री डा. डी.के. गर्ग चेयरमैन-ईशान शिक्षण संस्थान ने सत्यार्थ प्रकाश एवं आर्यसमाज के संबंध में अपने विचार व्यक्त किये। मुख्य वक्ता स्वामी विश्वानन्द जी ने अपने सुन्दर विचारों द्वारा सत्यार्थ प्रकाश के सच्चे अर्थ को बताया। कार्यक्रम का संयोजन करते हुये आचार्य जयेन्द्र जी ने ऋषि को कविता समर्पित करते हुये व सभी का धन्यवाद कर सत्र का समापन किया। रात्रिभोज श्री शैलेन जगिया सेक्टर-26, नोएडा के सौजन्य से किया गया। दिनांक 9-12-2018 प्रात: 8 बजे से 101 कुण्डीय 'विश्व शांति सौहार्द महायज्ञ' आचार्य डा. जयेन्द्र जी के ब्रह्मत्व में सम्पन्न हुआ व ऋत्विक श्रीमती गायत्री मीना रहीं। जिसमें वेदपाठ आर्ष गुरुकुल नोएडा के ब्रह्मचारी नीरज और दीपक आर्य द्वारा किया गया।

यज्ञ के मनोरम दृश्य को देखकर नोएडावासी भारी संख्या उमड़ पड़े और सभी वैदिक यज्ञ में आहुति प्रदान कर धर्म लाभ उठाया। यज्ञ व्यवस्था श्री मोहन प्रसाद उपाध्याय, श्री ओमकार शास्त्री, श्री विक्रम आर्य, श्री कैलाश आर्य, श्री शिव कुमार शास्त्री, श्री नरेन्द्र शास्त्री आदि उमाशंकर व गुरुकुल नोएडा के ब्रह्मचारियों ने अपना पूर्ण सहयोग दिया। अन्त में यज्ञब्रह्मा जी द्वारा याज्ञिकों को प्रसाद प्रदान कर आशीर्वाद दिया गया इस अवसर पर कै. गुलाटी परिवार द्वारा वर्ष 2019 के कैलेंडर का वितरण किया गया। यज्ञ हेतु सहयोग श्री रोहन सिन्हा परधेवता माता लक्ष्मी सिन्हा वानप्रस्थाश्रम नोएडा के सौजन्य से की गई। यज्ञ प्रसाद श्रीमती श्री कुलवीर भसीन जी के सौजन्य से प्राप्त हुआ।

मुख्य समारोह प्रात: 9:30 बजे आरम्भ हुआ। जिसमें ठा. विक्रम सिंह-अध्यक्ष राष्ट्र निर्माण पार्टी, मुख्य अतिथि डॉ. महेश शर्मा, डॉ. वीरपाल विद्यालंकार, कर्ण सिंह शास्त्री, स्वामी प्रणवानन्द जी, श्री आनन्द चौहान, श्री वीरेश भाटी, आचार्य धर्मपाल आर्य, डॉ. अनिल आर्य, डॉ. वी.एस. चौहान, श्री छत्रपति रंजीत राय आदि महानुभावों ने भाग लिया। मुख्य वक्ता डा. नरेन्द्र वेदालंकार, स्वामी विश्वानन्द, कर्ण सिंह शास्त्री ने अपने विचार दिये। भजनोपदेशक दिनेश आर्य 'पथिक' जी ने गुरुकुल के संबंध में गीत सुनाये। इस अवसर पर पं. रामप्रसाद बिस्मिल व स्वामी श्रद्धानन्द के बलिदान को याद किया गया।

कार्यक्रम के अवसर पर सम्मानित अतिथियों एवं विद्वानों द्वारा आर्यसमाज नोएडा की मासिक पत्रिका 'विश्ववारा संस्कृति' के कुशल संपादन की सराहना की। ब्र.ताराचन्द एवं ब्र. आदित्य द्वारा ओजस्वी भाषण एवं ब्रह्मचारियों द्वारा शारीरिक प्रदर्शन दिखाये गये। इससे प्रसन्न होकर संस्था के संरक्षक श्री आनन्द चौहान-निदेशक अमीटी शिक्षण संस्थान द्वारा ब्र. को प्रोत्साहन प्रदान किये गये। गुरुकुल के प्रतिभाशाली विद्यार्थियों को माता नारायणी देवी पुरस्कार, श्री वीरप्रताप अरोड़ा द्वारा प्रदान किया गया।

इस अवसर पर मुख्य वक्ता के रूप में आचार्य डॉ. वेदपाल जी की मंत्री जी द्वारा भूरि-भूरि प्रशंसा की गई व संस्था के अधिकारियों द्वारा सम्मानित किया गया। इसी के साथ श्रीमती गायत्री मीना, श्रीमती आदर्श बिश्नोई, श्रीमती संतोष लाल को इनके द्वारा किये सहयोग के लिये सम्मानित किया गया। भिन्न-भिन्न समाजों से पधारे अधिकारियों और माहनुभावों को स्मृति चिन्ह देकर आर्यसमाज नोएडा के प्रधान एवं मंत्री जी द्वारा सभी को सम्मानित किया गया। कार्यक्रम का संयोजन कर आचार्य जी ने सभी का धन्यवाद करते हुये शांतिपाठ के साथ कार्यक्रम का समापन किया।

कार्यक्रम में सर्वश्री रविशंकर अग्रवाल, श्री नरेन्द्र सूद, परेश गुप्त, राज सरदाना, सरला कालरा, वृंदा सग्गी, लक्ष्मी सिन्हा, कमलेश भाटिया, सरला जुनेजा, मधु भसीन, अन्नपूर्णा धवन, रमेश चन्द्रा, जितेन्द्र आर्य, कविता आर्या, सतेन्द्र आर्य, गिरजेश गोयल, राकेश कुमार, कैलाश आर्य, उमाशंकर आर्य, विवेक आर्य, घनानन्द, सुभाष, प्रमोद व अनेक संन्यासी वृंद, सेक्टर-33 के निवासी व उपस्थित सभी आर्यजनों ने कार्यक्रम को सराहा।

सभी महानुभावों ने ऋषि भोज (श्रीमती एवं श्री अशोक अरोड़ा जी के सौजन्य) से प्राप्त कर आर्यसमाज, आर्षगुरुकुल, वानप्रस्थाश्रम नोएडा के भव्य वार्षिकोत्सव की भविष्य के लिए यादें लेकर अपने-अपने घरों को लौटे।

➲ ➲ संपादक मंडल, विश्ववारा संस्कृति

समाचार - सूचनाएं

- 5 से 9 दिसम्बर को आर्य समाज, आर्ष गुरुकुल, वानप्रस्थाश्रम नोएडा का भव्य वार्षिकोत्सव मनाया गया जिसमें मूर्धन्य विद्वान डॉ. वेदपाल जी, प्रधान परोपपारिणी सभा द्वारा वेदकथा पं. दिनेश आर्य पथिक के सुमुधुर भजनों का आनंद सभी ने उठाया। मुख्य अतिथि डॉ. महेश शर्मा, केंद्रीय मंत्री भारत सरकार द्वारा आर्य समाज के कार्यों की भूरि-भूरि प्रशंसा की और स्वामी दयानन्द के उपकारों को स्मरण किया, कार्यक्रम में श्री आनंद चौहान, श्रीमती विमला बाथम, श्री नवाब सिंह नागर, श्री माया प्रकाश त्यागी, डॉ. वीरपाल, स्वामी विश्वानन्द, डॉ. अनिल आर्य, ठाकुर विक्रम सिंह, डॉ. नरेंद्र वेदालंकार, डॉ. सन्याल शर्मा, आदि द्वारा उद्‌बोधन दिया गया। 101 कुंडीय यज्ञ का भव्य आयोजन भी किया गया। कार्यक्रम अत्यंत ही सफल रहा। (विस्तृत विवरण पेज संख्या....)

- 25 दिसम्बर को केंद्रीय आर्य सभा के तत्वावधान में गुरुकुल कांगड़ी के संस्थापक स्वामी श्रद्धानंद व अन्य कई गुरुकुलों के संस्थापक के बलिदान के अवसर पर भव्य कार्यक्रम आयोजित किया गया जो बलिदान भवन से रैली के रूप में आत्मा होकर रामलीला मैदान में सम्मेलन के रूप में सम्पन्न हुआ। अनेक गुरुकुलों के ब्रह्मचारी, विद्वान, आर्यनेता, संन्यासी वृंद द्वारा भावपूर्ण स्मरण किया गया। आर्य जगत के मूर्धन्य विद्वान डॉ. वेदपाल जी प्रधान परोपकारिणी सभा द्वारा स्वामी श्रद्धानंद की जीवनी पर बड़े ही भावपूर्ण ढंग से प्रकाश डाला गया व उनके द्वारा किये गये उपकारों को स्मरण किया। अध्यक्षता आर्यजगत के भामाशाह श्री धर्मपाल आर्य रहे।

- संस्कृत सम्मेलन का आयोजन : उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान, लखनऊ द्वारा 28, 29, 30 दिसम्बर को अखिल भारतीय संस्कृत आर्य युवा महोत्सव का आयोजन आर्ष कन्या गुरुकुल वेदधाम, ग्राम सोरखा, सेक्टर-115 में सम्पन्न हुआ। इसमें संस्कृत भाषा के विद्वान, चिंतक एवं लेखक विभिन्न प्रदेशों से पधारे। इस अवसर पर संस्कृत विद्यालयों के मध्य संस्कृत भाषण, संस्कृत गीत गायन, योगासन और कबड्डी क्रीड़ा आदि प्रतियोगिताओं का आयोजन हुआ। इस कार्यक्रम में डा. अमिता चौहान चेयरपर्सन एमिटी शिक्षण संस्थान, डॉ. वाचस्पति मिश्र अध्यक्ष उप्र संस्कृत संस्थान एवं अन्य महान हस्तियां उपस्थित रहीं। कार्यक्रम का संचालन डॉ. जयेन्द्र कुमार, कुलपति आर्ष गुरुकुल द्वारा किया गया। कार्यक्रम बड़ा ही सफल रहा।

- 26 जनवरी को आर्यसमाज, आर्षगुरुकुल, वानप्रस्थाश्रम नोएडा में प्रात: 8 बजे ध्वजारोहण के पश्चात ब्र. द्वारा गायन क्रांतिकारी गीतों का, भाषण आदि का कार्यक्रम होगा, आप सभी सादर आमंत्रित हैं।

OO

शोक समाचार

आर्य समाज व गुरुकलों के परम सहयोगी यज्ञ योग में अत्यंत श्रद्धावान आर्य नेतृ माता सरोज अग्निहोत्री (धर्मपत्नी श्री दर्शन कुमार अग्निहोत्री) का स्वर्गवास 24-11-2018 को हो गया। उनकी श्रद्धांजलि सभा आर्य समाज हनुमान रोड, नई दिल्ली में में दिनांक 27-11-2018 को सम्पन्न हुई। इस श्रद्धांजलि सभा में प्रमुख रूप से स्वामी आर्यवेश, स्वामी प्रणवानन्द, स्वामी धर्ममुनि, आचार्य देवराज, डॉ. वागीश, आ. प्रेमपाल शास्त्री, डॉ. महेश विद्यालंकार, सत्यपाल पथिक, योगेश मुंजाल, आनंद चौहान, धर्मपाल, विनय आर्य, अनिल आर्य, आचार्य गवेन्द्र शास्त्री, आचार्य चंद्रशेखर शास्त्री आदि प्रमुख विद्वानों ने श्रद्धा-सुमन अर्पित किये।

दूध-केला-दलिया बढ़ाएंगे आपकी लंबाई

हमारे शरीर को एक लेबल तक की लंबाई चाहिए होती है, क्योंकि ज्यादा लंबाई या छोटापन लिए हुए लोग अन्य लोगों का मजाक ही बनते हैं। यानी ज्यादा लंबाई आ जाए तो परेशानी क्योंकि लंबे व्यक्ति हर जगह फिट नहीं हो पाते ना तो बस में, ना कार में, ना ही अन्य स्थितियों में। रही छोटे कद के लोगों की तो ये लोग भी लोगों के हंसने का ही पात्र बनते हैं। जबकि बहुत सारे लोगों के लिए लंबाई बढ़ाने वाले हॉर्मोन इतने मददगार नहीं होते। क्या आप भी कम हाइट के कारण परेशान हैं? अगर हां तो आपको कुछ खाद्य प्रदार्थ खाने होंगे जो आपकी लंबाई को बढ़ा सकते हैं। किसी भी इंसान की लंबाई उसके अनुवांशिक कारणों से जुड़ी होती है और 18 साल के बाद लोगों की लंबाई बढ़ना अमूमन रुक जाती है। लेकिन बहुत सारे दूसरे कारण जैसे एक स्वस्थ दिनचर्या और सही और संतुलित भोजन आपकी लंबाई पर प्रभाव डाल सकते हैं। कुछ फल और सब्जियां भी आपकी लंबाई बढ़ाने में मदद कर सकती हैं?

हरी पत्तेदार सब्जियां : यह सभी जरूरी पोषक तत्वों, कार्बोहायड्रेट, विटामिन और रेशों का खजाना होती हैं। इनके सेवन से लंबाई बढ़ाने वाले हॉर्मोन का स्राव बढ़ता है।

केला : केले में कैल्शियम, मैगनीज, पोटैशियम और स्वास्थवर्धक प्रोबायोटिक होता हैं जो लंबाई बढ़ाने में सहायक होते हैं।

- आपके रोज के भोजन में विटामिन-'सी', मैगनीज, जिंक, कैल्शियम, पोटैशियम, फॉस्फोरस और प्रोटीन होने बेहद होना जरूरी है, ये सभी लंबाई बढ़ाने वाले हॉर्मोन की गतिविधि को बढ़ाने में मदद करते हैं
- किसी इंसान की लंबाई एक खास होर्मोन से निर्धारित होंती है जिसको 'ह्यूमन ग्रोथ हॉर्मोन' कहा जाता है, यह हॉर्मोन दिमाग में उपस्थित पियूष ग्रंथि द्वारा स्रावित होता है और शरीर की लंबाई बढ़ाता है
- केले में कैल्शियम, मैगनीज, पोटैशियम और स्वास्थवर्धक प्रोबायोटिक होता हैं जो लंबाई बढ़ाने में सहायक होते हैं
- रोज के भोजन में विटामिन-'सी', मैगनीज, जिंक, कैल्शियम, और प्रोटीन होने बेहद होना जरूरी है, ये लंबाई बढ़ाने वाले हॉर्मोन की गतिविधि को बढ़ाने में मदद करते हैं।

अखरोट और अन्य बीज : इनमें प्रचुर मात्रा में सेहतमंद वसा, एमिनो एसिड और जरूरी तत्व होते हैं जो शरीर की कोशिकाओं और ऊतकों की मरम्मत करते हैं और नए ऊतक बनाने में सहायता करते हैं साथ ही ये पोषक तत्व लंबाई बढ़ाने वाले होर्मोन का स्राव भी बढ़ाते हैं।

अश्वगंधा : यह ऐसी जड़ी-बूटी है जिससे विभिन्न प्रकार के फायदे जुड़े हुए हैं। इससे हड्डियां चौड़ी होती हैं और उनमें मजबूती आती है। जिससे शरीर की लंबाई बढ़ती है।

डेयरी उत्पाद : डेयरी उत्पाद जैसे दूध, चीज और दही में जरूरी कैल्शियम, प्रोटीन और विटामिन 'ए', 'बी', 'डी' और 'ई' पाए जाते हैं जो लंबाई बढ़ाने में सहयोगी होते हैं।

दलिया : दलिया में प्रचुर मात्रा में प्रोटीन होता है जो मांसपेशियों को मजबूत करता है और लंबाई बढ़ाने में सहायक है।

सोयाबीन : यदि नियमित रूप से सेवन किया जाए तो सोयाबीन लंबाई बढ़ाने का प्राकृतिक स्रोत है। इसमें प्रचुर मात्रा में प्रोटीन, फोलेट, विटामिन, कार्बोहायड्रेट और रेशे होते हैं जो ऊतकों को सघन करते हैं और इंसान की लंबाई बढ़ाते हैं।

आर्यसमाज, आर्ष गुरुकुल, वानप्रस्थाश्रम के भव्य वार्षिकोत्सव की झलकियां

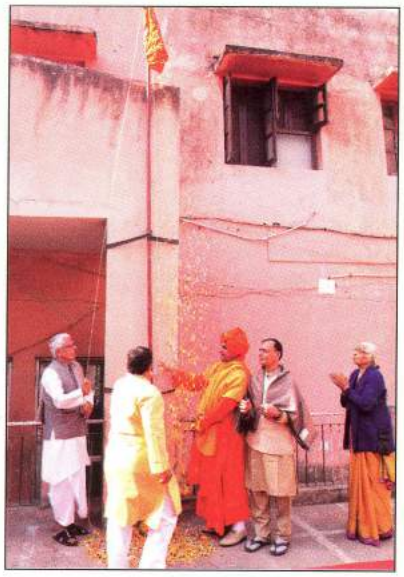

आर्यसमाज, आर्ष गुरुकुल, वानप्रस्थाश्रम के भव्य वार्षिकोत्सव की झलकियां

विश्ववारा संस्कृति

आर्य समाज, बी-69, सैक्टर-33, नोएड़ा (उ.प्र.) दूरभाष : 0120-2505731, 9871798221